विलियम ओ॰ डगलस

अनुवादक
विश्वदेव शर्मा

आत्माराम एण्ड संस, दिल्ली-6

EK JEEVANT ADHIKAR-PATRA
(Hindi Version of *'A Living Bill of Rights'*)
by
William O. Douglas
Translated by
Vishwa Deva Sharma
Rs. 2.00

प्रकाशक
रामलाल पुरी, संचालक
आत्माराम एण्ड संस
काश्मीरी गेट, दिल्ली-6

शाखाएँ
हौज़ खास, नई दिल्ली
माई हीरां गेट, जालन्धर
चौड़ा रास्ता, जयपुर
बेगमपुल रोड, मेरठ
विश्वविद्यालय क्षेत्र, चण्डीगढ़
महानगर, लखनऊ-6
रामकोट, हैदराबाद

मूल्य : दो रुपए
प्रथम संस्करण : 1963

मुद्रक
हिन्दी प्रिंटिंग प्रेस
दिल्ली

प्राक्कथन

इस बारे में बहुत कम विवाद होगा कि (अमेरिकी) संविधान के कौन से प्रावधान वैयक्तिक स्वतन्त्रता की रक्षा करते हैं। किन्तु जब यह निश्चित करना हो कि उनका अर्थ क्या है और वे सरकारी कार्रवाई के विरुद्ध व्यक्ति की रक्षा कहाँ तक करते हैं, तो उग्र वादविवाद उठ खड़े होते हैं। इन मतभेदों के सभी दौरों की पृष्ठभूमि देने के लिए एक ऐसी पाठ्य-पुस्तक की आवश्यकता होगी जो इस समस्या के सभी पहलुओं का गहराई और विस्तार के साथ विवेचन करे।

विधिज्ञों के परिचित क्षेत्र को ही व्याप्त करने वाली यह पुस्तिका कोई प्रबन्ध होने का दावा नहीं करती। यह तो अधिकार-पत्र से सम्बद्ध दर्शन या दृष्टिकोण का उल्लेख-भर करती है। यह आस्था की अभिव्यक्ति के रूप में लिखी गई है।

नवयुवक नागरिकों को, कालेज की आयु तक पहुंचने से पहले ही, यह समझना चाहिए कि आज के तनावपूर्ण और उलझनभरे युग में हमारे प्राचीन सिद्धान्तों को किस प्रकार चुनौती मिलती है। उन्हें यह जानना चाहिए कि अधिकार-पत्र पर, समाज से उत्पन्न होने वाले दबाव किस प्रकार पड़ते हैं। यह पुस्तिका इस आशा से लिखी गई है कि यह इस क्षेत्र में रुचि उत्पन्न करेगी। अगर मैं एक चर्चा खड़ी कर सकूँ और खोज की वृत्ति को प्रोत्साहन दे सकूँ तो मैं अपने आपको कृतकृत्य मानूँगा। इसी उद्देश्य से मैंने इस पुस्तिका के मूल पाठमें न्यायालयों के कुछ अत्यन्त महत्त्व-पूर्ण निर्णयों और बहुधा कुछ अन्य कृतियों के सन्दर्भों का भी समावेश कर दिया है।

—विलियम ओ० डगलस

1. अमेरिका में स्वतंत्रता का महत्त्व
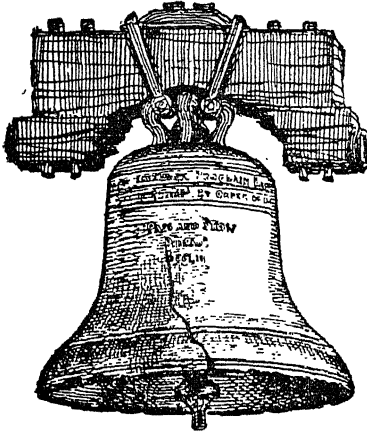
हमारा कहना है कि संयुक्त राज्य अमेरिका स्वतंत्रता का हामी है। लेकिन यह स्वतंत्रता वास्तव में है क्या और हमारे दैनिक जीवन में यह अभिव्यक्त कैसे होती है?

सत्रहवीं शताब्दी में यहाँ आने वाले बहुत से उपनिवेशी विश्वास और पूजा की उस स्वतंत्रता की खोज में थे जो 'पुरानी दुनिया' में उन्हें दुर्लभ थी। एक राष्ट्र के रूप में हमारा जन्म 'स्वाधीनता की घोषणा' के दिन से हुआ है जिसने घोषित किया कि यह एक स्वतःसिद्ध सत्य है

> कि सब मनुष्य बराबर बनाए गए हैं, कि उनके सृष्टा ने उन्हें कुछ असंक्राम्य अधिकार प्रदान किए हैं, कि इनमें जीवित रहने, स्वतंत्र रहने और सुख की खोज करने के अधिकार शामिल हैं।

सन् 1776 में, अधिकांश यूरोप के लिए 'स्वाधीनता की घोषणा' के ये सत्य स्वतःसिद्ध नहीं थे—बल्कि इन्हें गरम दिमागवालों का निरर्थक प्रलाप समझा जाता था। और आज संसार के एकदलतन्त्रीय भाग में, जिसमें साम्यवादी गुट शामिल है, स्वतंत्रता का अमेरिकी आदर्श स्वीकार नहीं किया जाता; उन देशों में व्यक्ति के अधिकारों और स्वतंत्रताओं को, एक सर्वशक्तिमान-राज्य और उसे चलाने वाले मुट्ठी-भर लोगों के हितों के समक्ष गौण समझा जाता है।

बहुत से राष्ट्रों में ऐसे लोग भी हैं जिन्होंने स्वतंत्रता का कभी अनुभव ही नहीं किया और इसलिए जब हम स्वतंत्रता की बात करते हैं तो वे उसका मतलब ही नहीं समझ पाते। अर्द्ध-विकसित देशों में रहने वालों को कभी-कभी स्वतंत्रता के अमूर्त आदर्श की अपेक्षा भोजन, वस्त्र और दवाइयाँ अधिक महत्त्वपूर्ण मालूम हो सकती हैं।

और अधिकतर तो हम भी, जिन्हें कि अच्छा भोजन और श्रेष्ठ चिकित्सा-सुविधाएँ प्राप्त हैं, स्वाधीनता की घोषणा और संविधान के शब्दों को किसी और जनता तथा किसी और समय के लिए कहे हुए मान बैठते हैं। हमारी क्रांति हमारे पीछे है। हम कोरिया या तुर्की में विद्यार्थियों के साहस पर भले ही पुलकित हो उठते हों, जबकि उनकी दुर्दम अवज्ञा दमनकारी शासनों को उलट देती है, किन्तु हमारी क्रांति पूरी तरह एक सुदूरवर्ती अंग्रेज राजा के विरुद्ध ही नहीं थी। हमने अपने संविधान में, घरेलू और विदेशी दोनों ही प्रकार के निरंकुश शासकों से स्वतंत्र रहकर अपना शासन चलाने के एक अविच्छिन्न संकल्प को साकार किया है। इसलिए हमारा संविधान कोई पुराना, अप्रचलित और ऐतिहासिक दस्तावेज़ नहीं है। यह एक राष्ट्र के रूप में हमारे जीवन का हृदय है—भले ही कुछ वार हम लोग इसे उतना ही सहज मान बैठें, जितना की अपनी श्वास-वायु को मानते हैं। यह हमेशा हमें जार्ज वाशिंगटन के इस कथन की याद दिलाता रहता है कि "सरकार आग की तरह है—एक खतरनाक सेवक, एक भयानक स्वामी।"

भले ही एक औसत अमेरिकी इस संविधान के बारे में अधिक न जाने, फिर भी उसमें न्याय-परायणता और दूसरे लोगों के अधिकारों के प्रति समादर की एक बुनियादी भावना रहती है। लेकिन कुछ अवसरों पर कुछ समुदाय-विशेष, सरकारी अफसर या विधान सभाओं के बहुसंख्यक सदस्य, भूल से या जानबूझकर, कुछ ऐसी बातें कर बैठते हैं जिनसे अन्य लोगों के अधिकारों का अतिलंघन होता है। यही वह अवसर होता है जब न्यायालयों में हमारी स्वतंत्रताओं के क्षेत्र-विस्तार के विषय में विवाद उठ खड़े होते हैं।

2. अधिकार-पत्र क्या है ?
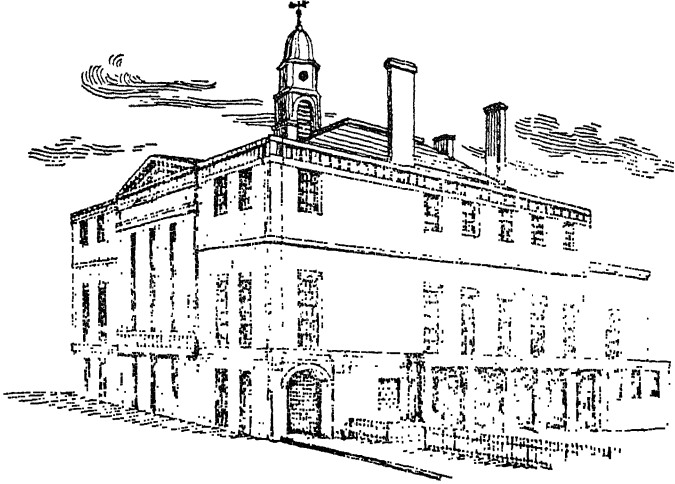
हमारी स्वतंत्रताओं को अक्सर हमारा 'अधिकार-पत्र' (बिल ऑफ राइट्स) कहा जाता है। इस शब्द से हमारा मतलब क्या है?

यह 'अधिकार-पत्र' है, संयुक्त राज्य के संविधान के पहले दस संशोधन। स्वयं संविधान के स्वीकृत होने के तीन वर्ष से कुछ ही अधिक समय बाद, 15 दिसम्बर, 1791 को, ये लागू हो गए थे। ये संशोधन इसलिए जोड़े गए थे कि संविधान को सत्यांकित (रैटीफाई) करने वाले अनेक राज्यों ने यह सत्यांकन केवल इस समझौते के बाद ही किया था कि **संघीय सरकार की शक्ति सीमित करने के लिए** एक 'अधिकार-पत्र' स्वीकार किया जाएगा। ये इस प्रकार हैं:

अनुच्छेद 1

किसी धर्म को स्थापित करने या उसके अबाध अवलम्बन पर प्रतिबन्ध लगाने; या भाषण की, या प्रेस की स्वतंत्रता को सीमित करने; या शान्तिपूर्वक एकत्र होने और अपनी शिकायतें दूर कराने के लिए सरकार को याचिका देने के, लोगों के, अधिकार के सम्बन्ध में कांग्रेस कोई कानून नहीं बनाएगी।

अनुच्छेद 2

एक स्वतंत्र राज्य की सुरक्षा के लिए एक सुनियमित नागरिक-सेना (मिलिशिया) आवश्यक होने के कारण हथियार रखने और उन्हें धारण करने के लोगों के अधिकार का अतिलंघन नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 3

शांतिकाल में मकान-मालिक की अनुमति के बिना, और युद्धकाल में कानून से निर्धारित प्रक्रिया के बिना, किसी मकान में, किसी सैनिक को नहीं ठहराया जाएगा।

अनुच्छेद 4

अयुक्तियुक्त तलाशियों और अभिग्रहणों (ज़ब्तियों) से अपने शरीरों, मकानों, कागज-पत्रों और परिसम्पत्तियों की सुरक्षा के लोगों के अधिकार का अतिक्रमण नहीं किया जाएगा, और शपथ या प्रतिज्ञान से पुष्ट, संभावित कारण के बिना और तलाशी की जगह और अभिग्राह्य व्यक्तियों या वस्तुओं का विशेष विवरण दिए बगैर कोई अधि-पत्र (वारंट) जारी नहीं होंगे।

अनुच्छेद 5

युद्ध या सार्वजनिक खतरे के समय वास्तविक सेवा करते हुए स्थल या जल-सेना, या नागरिक-सेना (मिलिशिया) में उत्पन्न हुए मामलों को छोड़कर, किसी भी व्यक्ति को, ग्रैण्ड जूरी के सम्मुख पेश किए या उसके अभ्यारोपण के बगैर, मृत्यु-दण्ड वाले अपराध या और तरह से अकीर्तिकर अपराध की जवाब-देही के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा; किसी व्यक्ति को एक ही अपराध के लिए प्राण या अंग के संकट में दुबारा नहीं डाला जाएगा; किसी व्यक्ति को किसी आपराधिक मामले में अपने विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जायगा और न ही किसी को उचित कानूनी कार्रवाई के बगैर अपने प्राण, स्वतंत्रता या सम्पत्ति से वंचित किया जाएगा; न्याय्य क्षति-पूर्ति के बिना

कोई निजी सम्पत्ति सार्वजनिक उपयोग के लिए नहीं ली जाएगी।

अनुच्छेद 6

समस्त आपराधिक-अभियोजनों में अभियुक्त को यह अधिकार प्राप्त होगा कि वह उस राज्य की, और उस ज़िले की जिसमें अपराध किया गया हो और जो कानून द्वारा पहले ही से निर्धारित होगा—निष्पक्ष जूरी द्वारा अविलम्ब और सार्वजनिक परीक्षण प्राप्त कर सके, और उसे अभियोग की प्रकृति और कारण से सूचित किया जाए; अपने विरुद्ध प्रस्तुत गवाहों से उसका सामना कराया जाए; अपने पक्ष के गवाहों के बारे में अनिवार्य आदेशिका (कम्पलसरी प्रोसेस) प्राप्त कर सके और अपनी सफाई के लिए अभिवक्ता (वकील) की सहायता पा सके।

अनुच्छेद 7

कॉमन लॉ के वादों में, जहाँ कि विवादग्रस्त मूल्य बीस डालर से अधिक हो, जूरी द्वारा परीक्षण के अधिकार की रक्षा की जायगी और जूरी द्वारा परीक्षित किसी तथ्य की पुनः परीक्षा, कॉमन लॉ के नियमों के अलावा किसी और रूप में, संयुक्त राज्य के किसी भी न्यायालय में नहीं हो सकेगी।

अनुच्छेद 8

न तो बहुत भारी ज़मानतें मांगी जाएँगी, न बहुत भारी जुर्माने किए जाएँगे, न क्रूरतापूर्ण और असामान्य दण्ड दिए जाएँगे।

अनुच्छेद 9

संविधान में कुछ अधिकारों के गिनाए जाने का अर्थ यह नहीं समझा जायगा कि लोगों द्वारा प्रतिधारित अन्य अधिकार नकार या अनादृत कर दिए गए हैं।

अनुच्छेद 10

जो शक्तियाँ न संविधान द्वारा संयुक्त राज्य को सौंपी गई हैं न राज्यों को प्रतिषिद्ध की गई हैं, वे क्रमशः राज्यों के लिए या लोगों के लिए प्रारक्षित हैं।

ये वे प्रत्याभूतियां (गारंटियां) हैं जिन्हें मानव के अधिकारों की हमारी घोषणा में शामिल करने के लिए टॉमस जेफरसन और जेम्स मैडिसन ने कठोर परिश्रम किया था। इनमें वे अधिकार सम्मिलित हैं जिन्हें जॉन एडम्स 'विश्व के महान् विधायक से प्राप्त अधिकार' कहता था। टॉमस जेफरसन की मान्यता थी कि "अधिकार-पत्र वह वस्तु है जिसे जनता संसार की हर सरकार से पाने की हक़दार है, चाहे वह सरकार सामान्य हो या विशिष्ट, और जिन्हें किसी भी न्यायपरायण सरकार को अस्वीकार या स्थगित नहीं करना चाहिए।"

न्यायाधीशों और विधिज्ञों के लिए हमारे अधिकार-पत्र का अर्थ उस स्वतंत्रता की गारंटियां भी हो गया है जो कि स्वयं संविधान-काय में अन्तर्विष्ट हैं। इनमें ये सम्मिलित हैं:

किसी लोक-पद के लिए किसी धार्मिक परीक्षा का प्रतिषेध।

किसी व्यक्ति के कारागार या सुधार-घर में बन्द रखे जाने (परिरोध) की वैधता जाँचने के एक उपाय—बन्दी-प्रत्यक्षी-

करण आलेख (रिट आफ हैबियस कार्पस) के स्थगन के विरुद्ध प्रतिषेध।

यह अपेक्षा कि किसी व्यक्ति पर किसी सुदूर स्थान पर नहीं बल्कि उसी राज्य में मुकदमा चलाया जाना चाहिए जहाँ अपराध किया गया हो।

घटनोत्तर (एक्स पोस्ट फैक्टो) कानूनों—ऐसे कानूनों के विरुद्ध प्रतिषेध जो बनाये तो आज जाएँ मगर लागू बीते हुए दिन के उस आचरण पर हों, जो कि उस समय वैध था जब लोग उसे कर रहे थे।

कालुष्य-आनियमों (बिल्स आफ अटेण्डर)—ऐसे विधानों के विरुद्ध प्रबन्ध, जिनसे लोगों को समाज से विधि-बाह्य घोषित कर दिया जाता था और नागरिकता के किन्हीं अधिकारों के उपभोग से रोक दिया जाता था।

यह अपेक्षा कि राजद्रोह का हर कृत्य दो गवाहों द्वारा प्रमाणित होना चाहिए।

सामान्यतया यह भी समझा जाता है कि अधिकार-पत्र में, संविधान के अन्य संशोधनों में अन्तर्विष्ट व्यक्तिगत-अधिकारों की ये गारंटियां भी शामिल हैं :

तेरहवें संशोधन द्वारा दास-प्रथा और अनैच्छिक अधिसेविता (इनवालण्टरी सर्वीट्यूड) के प्रतिषेध।

चौदहवें संशोधन द्वारा दी गई यह गारंटी कि संयुक्त राज्य में उत्पन्न होने वाले या देशीयकृत सभी व्यक्ति उसके नागरिक होंगे चाहे उनका मूलवंश या रंग कुछ भी क्यों न हो।

चौदहवें संशोधन का यह आदेश कि कोई भी राज्य कानून

की उपयुक्त प्रक्रिया के बिना किसी व्यक्ति को उसके प्राण, स्वतंत्रता या सम्पत्ति से वंचित नहीं करेगा।

चौदहवें संशोधन का समान संरक्षण खण्ड जिसमें किसी व्यक्ति को कानून का समान संरक्षण नकारने से राज्यों को रोका गया है।

पन्द्रहवें संशोधन की यह गारंटी कि संघीय सरकार या किसी राज्य द्वारा, मूलवंश या रंग के कारण, नागरिकों का मताधिकार नकारा या न्यून नहीं किया जायगा।

उन्नीसवां संशोधन जो स्त्रियों के मताधिकार की संरक्षा करता है।

ये, और आरम्भिक दस संशोधन[1] वास्तव में हमारा अधिकार-पत्र है, क्योंकि ये, या तो संघीय अथवा राज्य सरकारों के विरुद्ध व्यक्ति के अधिकारों की गारंटी करते हैं।

कुल मिलाकर, वैयक्तिक अधिकारों की ये विभिन्न प्रत्याभूतियां यह घोषित करती हैं कि हमारे, यानी जनता के, कुछ ऐसे अधिकार हैं जिनका सम्मान राष्ट्रपतियों और राज्यपालों, कांग्रेस और राज्य विधान-मण्डलों, संघीय और स्थानीय अधिकरणों, राजकीय और संघीय न्यायाधीशों द्वारा किया जाना अनिवार्य है।

जॉन लॉक ने दीर्घकाल से चले आते एक मत को संधिबद्ध किया था कि विधान-मण्डलों की शक्ति को सीमित करना आवश्यक है: "उनकी

1 जब कि जेफरसन और मैडिसन द्वारा तैयार किये गए पहले दस संशोधनों ने मूलतः केवल संघीय सरकार पर परिसीमाएँ लगाई थीं, चौदहवां संशोधन अंगीकार करते समय तक एक परिवर्तन आ गया। जैसा कि हम देखते हैं, मूल अधिकार-पत्र के कुछ प्रबन्ध, न्यायिक-अन्वय के परिणामस्वरूप, चौदहवें संशोधन के यथोचित-प्रक्रिया खण्ड के कारण राज्यों पर भी लागू माने गए।

शक्ति कितनी भी विस्तृत हो, समाज के सार्वजनिक हित तक सीमित होती है। यह एक शक्ति है जिसका उद्देश्य संरक्षण के अतिरिक्त और कुछ नहीं है और इसलिए इसे प्रजा को नष्ट करने, दास बनाने या जानबूझकर निर्धन बनाने का कोई अधिकार नहीं है।"[1] हमारा अधिकार-पत्र शासन की तीनों शाखाओं को सीमित करता है। यह सरकार के समस्त विभागों को कानून के शासन के अधीन बनाता है और ऐसी सीमाएँ निश्चित करता है जिनका अतिक्रमण कोई भी अधिकारी नहीं कर सकता। यह इस बात पर बल देता है कि इस देश में मनुष्य गरिमा के साथ और भय-विहीन होकर विचरण करता है, कि उसे एक सर्वशक्तिमान शासन के सम्मुख रेंगते फिरने की ज़रूरत नहीं है।

नवें और दसवें संशोधन हमारी सरकार के रूप के सम्बन्ध में विशेष महत्त्व रखते हैं। कुछ अन्य देशों, जैसे भारत और रूस, में ऐसी संघीय पद्धति है जिसमें राज्यों की स्थिति सर्वथा अधीनता की है। इसका कारण यह है कि इनका निर्माण संघीय सरकार ने किया है। हमारे यहाँ इससे उलटी प्रक्रिया चली है। हमारी राष्ट्रीय सरकार का निर्माण राज्यों ने किया है और जो अधिकार उन्होंने सौंपे नहीं हैं उन्हें स्वयं अपने पास रखा है। यही कारण है कि नवें और दसवें संशोधनों में 'लोगों' और 'राज्यों' के पास अधिकारों का प्रारक्षण बहुत महत्त्वपूर्ण हो जाता है। संघीय सरकार को न सौंपे गए विषयों पर राज्यों और जनता का एकमात्र नियंत्रण है। जब तक कि वे संघीय संविधान का अतिक्रमण न करें, राज्य और जनता, स्थानीय मामलों के लिए जैसी चाहें वैसी सरकार बना सकते हैं।

अधिकार-पत्र की कुछ गारंटियां पुरानी पड़ गई-सी मालूम होती हैं। स्वतंत्र भाषण, स्वतंत्र प्रेस, स्वतंत्र धर्म और स्वतंत्र सम्मिलन के जिन अधिकारों की प्रथम संशोधन में गारंटी दी गई है, वे स्पष्ट ही मौलिक

1. 'ट्रीटाइज़ आफ सिविल गवर्नमेण्ट' (1690)

महत्त्व के हैं। लेकिन बीसवीं सदी का एक नागरिक स्वभावतः ही, द्वितीय संशोधन द्वारा सुरक्षित किये गए लोगों के हथियार धारण करने के अधिकार के बारे में, और तृतीय संशोधन द्वारा गारंटी किये गए, अपने घर में सैनिकों के न ठहराये जाने के अधिकार के बारे में, बहुत कम चिन्तित है। ये उस समय के ब्रिटिश व्यवहारों के विरुद्ध स्पष्ट विद्रोह था जबकि अमेरिका एक उपनिवेश था, और अब इन्हें बहुत महत्त्व का नहीं समझा जाता। फिर भी अन्य गारंटियों का रोज का महत्त्व है। दूसरे और तीसरे संशोधनों की गारंटियां भी अमेरिकी शासन के एक गंभीर सिद्धान्त को उजागर करती हैं—सैनिक शासन पर असैनिक शासन की तरजीह के सिद्धान्त को, जो, जैसा कि हम आगे देखेंगे, हमारे घरेलू मामलों को लगातार प्रभावित करता रहा है।

अमेरिका में राजकीय और संघीय अधिकारी संविधान का सम्मान करने और उसका पालन करने की शपथ लेते हैं। यदि कोई अधिकारी उस शपथ का पालन न कर पाये और किसी व्यक्ति को उसके संवैधानिक अधिकारों से वंचित करने का प्रयास करे तो न्यायालयों का यह कर्त्तव्य होता है कि उस अधिकारी की कार्यवाही को लागू करने से इनकार कर दें। यह सच है कि कोई पद्धति परिपूर्ण नहीं होती और अमेरिकी शासन पद्धति भी कई तरह से अपूर्ण है। फिर भी, प्रायः, सरकारी अधिकारियों द्वारा व्यक्ति के संवैधानिक अधिकारों का सम्मान किया जाता है और जब कभी उनका इस प्रकार सम्मान नहीं किया जाता तो न्यायालयों के निर्णय उनका पालन आवश्यक बना देते हैं।

3. मूलभूत स्वतंत्रताएँ
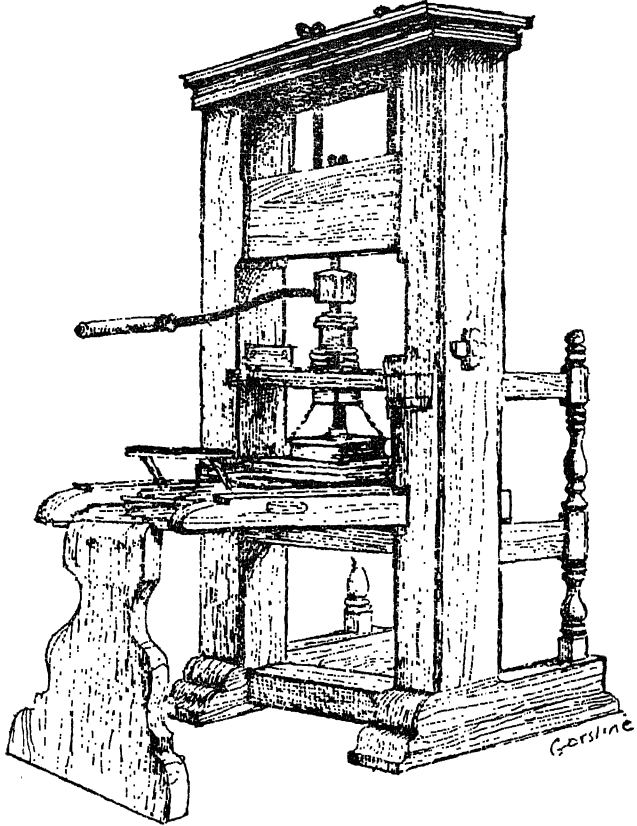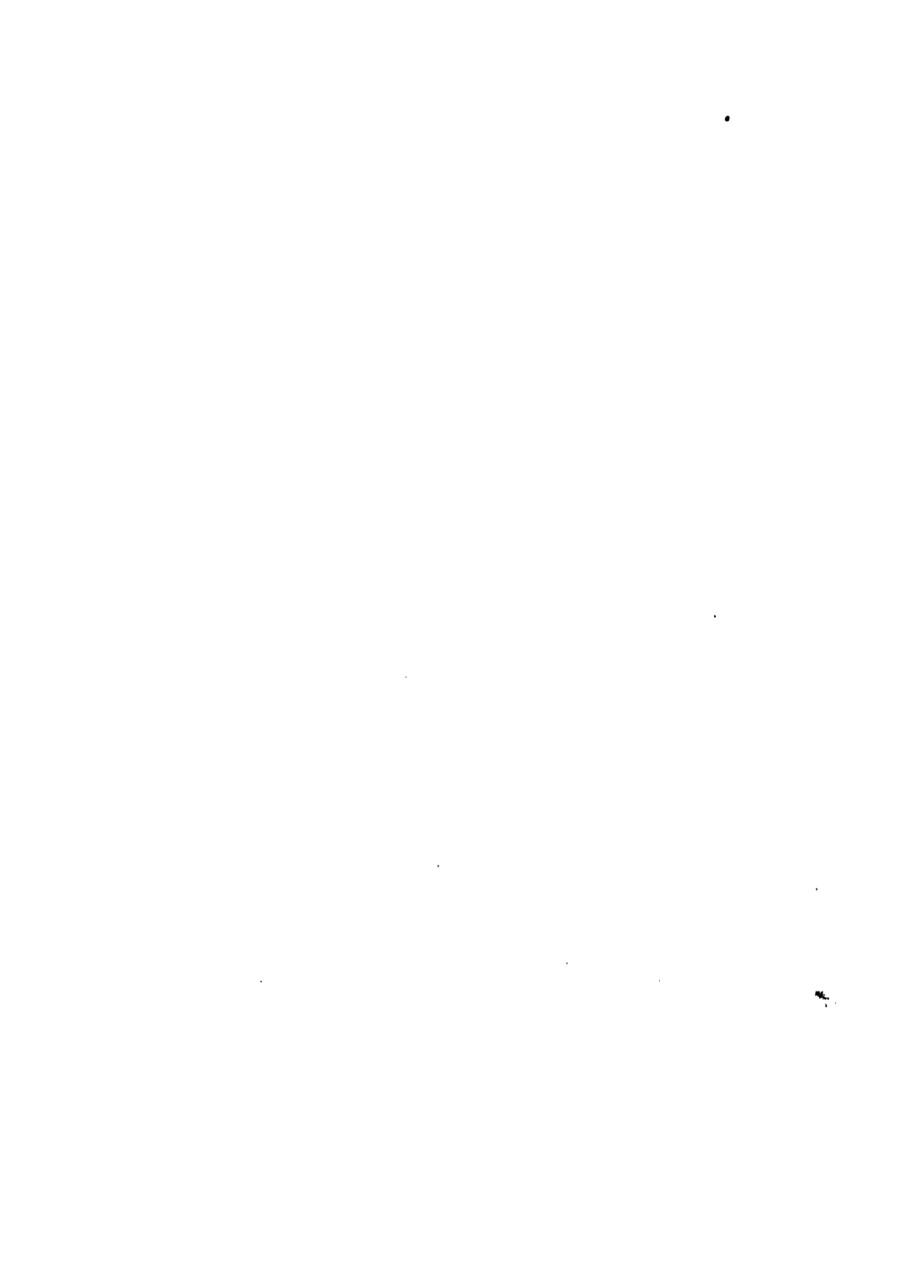
संविधान में निहित बहुत-सी गारंटियां स्वतंत्रता के लिए मूलभूत हैं।

अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

अपने विचारों को संचरित और अभिलिखित करने की मनुष्य की क्षमता ने उसके विचारों के लिए देश और काल के पार जाना संभव कर दिया है और उन्हें लोहे और पत्थर से भी अधिक टिकाऊ बना दिया है। मनुष्य द्वारा अर्जित ज्ञान उसके साथ ही मरता नहीं बल्कि दूसरों के लिए आधार के रूप में जीवित रहता है।

लोगों को दुस्साहसिक कार्यों के लिए उकसाने की बात सचमुच ख़तरनाक है। मगर फिर भी, जैसा कि इतिहास बतलाता है, विचारों का दमन और भी ख़तरनाक है। अंधकार-युग पुस्तकालयों के विनाश की घटनाओं से भरे पड़े हैं। यदि लिज़ि मीटनर ने हान और स्ट्रासमैन के परीक्षणों के बारे में पढ़ा न होता और फिर वह उनके बारे में अपने विचार फर्मी, जोलियट और दूसरों को न बताती तो संभव है अणु-शक्ति अभी तक अप्रयुक्त ही पड़ी होती।

मनुष्य ने अभिव्यक्ति की शक्ति के प्रति दो में से एक रूप में रुचि दिखाई है। कुछ ने कहा है कि क्योंकि विचार ख़तरनाक हो सकते हैं इसलिए उनकी अभिव्यक्ति सत्ताधारी लोगों द्वारा भले प्रकार नियंत्रित रहनी चाहिए। कम्यूनिस्टों का रवैया इसी प्रकार का है जो कि 'पार्टी लाइन' से इधर-उधर जाने वालों को क़ैद कर देते हैं, या देश से निष्कासित कर देते हैं या मार डालते हैं। सारे एकदलवादियों का यही दर्शन रहा है। इस दृष्टिकोण की सटीक अभिव्यक्ति वर्जीनिया के कोलोनियल गवर्नर सर विलियम बर्कले ने की है, जिसने सन् 1671 में लिखा था:

> ईश्वर का शुक्र है कि हमारे यहाँ स्वतंत्र स्कूल और छपाई नहीं हैं; और मैं आशा करता हूँ कि हमारे यहाँ अगले सौ साल तक ये स्वतंत्र होंगे भी नहीं; बात यह है कि शिक्षा ने संसार में अवज्ञा, कुफ्र और फ़िरक़े पैदा कर दिए हैं और छपाई ने उनका, और अच्छी से अच्छी सरकार के प्रति भी अपलेखों का प्रचार किया है।···ईश्वर इन दोनों से हमारी रक्षा करें।

यही दर्शन टेनेसी में हुए प्रसिद्ध स्कोप्स के मुकदमे के पीछे था, जिसका चित्रण 'इनहैरिट द विंड' नामक चल-चित्र में किया गया है। इसमें, 1920 से 1930 के बीच में, एक शिक्षक पर डार्विन का विकास-सिद्धान्त पढ़ाने के लिए मुकदमा चला था और उसे सज़ा दी गई थी क्योंकि यह सृष्टि की उस कथा के विरुद्ध था जो बुक आफ जिनेसिस में दी गयी है।[1]

अमेरिकी आदर्श यह है कि सरकारें सोचने और बोलने की आज़ादियों पर प्रतिबन्ध लगा ही नहीं सकतीं क्योंकि वे तो मानवता की उपलब्धियों की मूल-स्रोत हैं। इतिहास यह शिक्षा देता है कि विचारों के दमन के परिणाम और खतरे, उनकी अभिव्यक्ति की छूट के वास्तविक या कल्पित अंदेशों की बनिस्बत हमेशा ही बड़े रहेंगे। उन्नीसवीं सदी के एक महान् ब्रिटिश लेखक जान स्टुअर्ट मिल ने इस प्रस्ताव को सबसे अच्छे तरीके से प्रस्तुत किया है:

> यदि एक व्यक्ति को छोड़कर सारी मानव-जाति एक मत की होती और केवल एक व्यक्ति विपरीत मत का होता, तब भी, मानव-जाति के लिए उस व्यक्ति को चुप करा देना उतना ही अन्यायपूर्ण होता जितना कि उस एक व्यक्ति द्वारा (यदि उसके पास शक्ति होती तो), सम्पूर्ण मानव-जाति का चुप करा दिया जाना। यदि मत कोई ऐसी व्यक्तिगत सम्पत्ति-मात्र होता जिसका

1. स्कोप्स वि० स्टेट्स, 154 टेने० 105।

> अपने धारक के अतिरिक्त किसी के लिए कुछ मूल्य न हो, यदि इसके उपभोग में पड़ने वाली बाधा सिर्फ एक व्यक्तिगत हानि होती तब तो इस बात से फर्क पड़ता कि वह हानि केवल कुछ लोगों की हुई या अधिक लोगों की। किन्तु मत की अभिव्यक्ति को चुप करा देने में एक विचित्र दोष यह है कि यह पूरी मनुष्य-जाति पर डाका होता है। यह डाका वर्तमान पीढ़ी पर भी पड़ता है और भावी पीढ़ियों पर भी। उन पर भी पड़ता है जो किसी मत के विरोधी हैं और उन पर और अधिक पड़ता है जो उस मत के समर्थक हैं। यदि वह मत सही हो तो लोग गलती के स्थान पर सत्य स्थापित करने के एक अवसर से वंचित रह जाते हैं और यदि वह मत गलत हो तो लोग उस और भी लाभदायक अवसर को खो बैठते हैं जिसमें गलती से सत्य के टकराव द्वारा सत्य का स्पष्टतर बोध और उसकी सजीवतर छाप संभव हुआ करती है।

प्रथम संशोधन के पीछे यही भावना है जो निर्विकल्प रूप से घोषित करता है कि "कांग्रेस भाषण या प्रेस की स्वतंत्रता को सीमित करने वाला कोई क़ानून नहीं बनाएगी।"

अन्तिम विश्लेषण से पता चलता है कि स्वाधीनता उस तरीक़े का नाम है जिसके अनुसार हम एक असहमत पड़ौसी, एक असहमत व्यक्ति, या अपने बीच अल्प-मत से मत-साम्य रखने वाले किसी व्यक्ति के बारे में सोचते हैं, या उसके साथ बर्ताव करते हैं। यह स्वाधीनता उस स्वतंत्रता का भी नाम है जिसका ऐसा व्यक्ति वास्तव में उपभोग करता है।

मिल का कथन इस बात पर बल देता है कि किसी विचार का दमन उस व्यक्ति के प्रति ही अन्याय नहीं है जो उसे व्यक्त करता है; "यह तो सम्पूर्ण मनुष्य-जाति पर डाका है।" अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता

एक दुतरफा अधिकार है। यह बोलने, लिखने, चित्रित करने का अधिकार है। यह सुनने, पढ़ने, देखने, जानने का अधिकार भी है। संचरण में आवश्यक रूप से दो या दो से अधिक व्यक्ति अन्तर्ग्रस्त होते हैं। जब सोवियत संघ, रूस में, बोरिस पास्तरनाक का उपन्यास 'डॉ० ज़िवागो' बिकने देने से इनकार करता है तो वह पास्तरनाक को अपने विचार अभिव्यक्त करने से वंचित करता है। साथ ही यह करोड़ों सोवियत-नागरिकों को, उस कृति से आनन्द प्राप्त करने और प्रेरणा ग्रहण करने के अधिकार से भी वंचित करता है, जिसने पास्तरनाक को नोबल पुरस्कार दिलाया है।

हमारे संविधान में 'भाषण' और 'प्रेस' की स्वतंत्रता की चर्चा है। यह किसी समाचार-सम्पादक, लेखक, या भाषण-कर्त्ता की स्वतंत्रता पर सेंसर लगाने की मनाही करता है। क्या यह फिल्मों और टेलीविज़न को भी सेंसर से बचाता है ? यह प्रश्न कभी अदालतों द्वारा निर्णीत नहीं हुआ है, यद्यपि बहुत लोग यह मानते हैं कि प्रथम संशोधन द्वारा हर-एक और सभी प्रकार के सेंसर की मनाही है। सेंसर के विरुद्ध तर्क बिल्कुल स्पष्ट है : किसी को भी यह बताने का अधिकार नहीं है कि हमारी रुचियाँ, विचार और विश्वास क्या हों। किसी अधिकारी को यह अधिकार नहीं है कि बताए कि क्या बेकार है और क्या मूल्यवान है। यद्यपि कथा साहित्य, फिल्मों, व्यंग्य-चित्रों, चित्रों, मूर्तियों आदि का प्रारम्भिक उद्देश्य मनोरंजन होता है, लेकिन वे विचारों को भी प्रकट करते हैं। किसी प्रकाशन के दमन की अनुमति सिर्फ किसी व्यक्ति की इस राय के आधार पर दे देना कि अमुक कथन किसी राजनैतिक या साम्प्रदायिक समूह के प्रति आपत्तिजनक है और उसमें कोई कलात्मक या बौद्धिक गुण नहीं है, अलोकप्रिय विचारों को चुप करा देने का बड़ा सरल हथियार उपलब्ध करा देना होगा। साहित्यिक कृति के रूप में 'अंकल टाम्स केबिन' कुछ आदर्श न था मगर लोगों के

विचारों पर उसका बहुत बड़ा प्रभाव पड़ा।

किसी व्यक्ति के झूठे कथन से किसी की मानहानि होने पर व्यक्ति मुआवज़ा वसूल सकता है। उसकी क्षतिपूर्ति अपलेख या अपवचन (लाइबल और स्लैण्डर) के लिए की जाने वाली ऐतिहासिक कार्रवाई द्वारा की जाएगी। ऐसा प्रतीत होगा कि इस कार्रवाई के विषय में व्यवस्था करने के बारे में प्रथम संशोधन द्वारा कांग्रेस पर प्रतिबंध लगा दिया गया है मगर राज्य, संघ बनने से भी पहले से, परम्परागत रूप से, इस विषय में व्यवस्था किए हुए थे और तब से बराबर किए हुए हैं। लेकिन सरकारी कामकाज के बारे में, या किसी राजनैतिक उम्मीदवार की किसी पद के लिए उपयुक्तता तय करने के बारे में, क़ानून ने, स्वतंत्र टिप्पणी और यहाँ तक कि कठोर आलोचना के भी बहुत विस्तृत अधिकार स्वीकार कर लिए हैं। सार्वजनिक मामलों के बारे में विचारों की अभिव्यक्ति सिर्फ इसलिए दबा नहीं दी जा सकती कि किसी ने निर्णय किया है कि वे विचार असत्य हैं। इस प्रकार हम सार्वजनिक मुद्दों पर अधिक से अधिक लम्बी-चौड़ी बहस को प्रोत्साहन देते हैं।

सारे इतिहास में विचारों के दमन के प्रयत्नों की हिमायत यह कह-कर की गई है कि दबाए जाने वाले विचार असत्य और हानिकारक थे। असत्य सिद्धान्तों के बारे में धर्मयुद्ध लड़े गए। 'असत्य' और धर्मविरोधी कहकर वैज्ञानिक अनुसंधानों पर आक्षेप किए गए। जिनके हाथ में सत्ता है उनके लिए हर उस बात को जिससे वे असहमत हों, खतरनाक या झूठा मान लेना बड़ा सरल है। कुछ लोग चाहते हैं कि साहित्य और कला उन्हीं धार्मिक और नैतिक मूल्यों को अभिव्यक्त करे जिन्हें वे स्वयं मानते हैं। कुछ लोग खुले रूप में यौन-चर्चा करनेवाली पुस्तकों को सेंसर करने या उन्हें प्रकाशित या वितरित करनेवालों को दण्डित करने के प्रयत्न में बहुत आगे तक गये हैं। जब किसी व्यक्ति को अश्लील साहित्य प्रकाशित या

वितरित करने पर दण्ड दिया जाता है तो कार्रवाई जूरी के सामने की जाती है। प्रेस की स्वतंत्रता के लिए यह बहुत बड़ी सुरक्षा है, क्योंकि अगर सेंसर के ही हाथ में सब कुछ हो तब तो वह कलम के एक झटके से किसी भी प्रकाशक का दमन कर सकता है, मगर निष्पक्ष जाँच के वर्तमान नियमों के अधीन सरकार के लिए यह बहुत कठिन और टेढ़ा काम है कि वह जूरी पर इस बात के लिए ज़ोर डाल सके कि वह किसी प्रकाशन को गैर-क़ानूनी करार दे दे और प्रकाशक या खुदरा विक्रेता को जुर्माने या क़ैद की सज़ा दे दे।

अश्लीलता के आरोप से साहित्य की रक्षा करने के मामले में अदालतें बहुत आगे तक गई हैं। यह आवश्यक है कि किसी पुस्तक की समग्र रूप में जाँच की जाए, न कि उसके अलग-अलग अशोभन अंशों के आधार पर। आजकल न्यायपालिका की प्रवृत्ति सिर्फ ऐसे अतिवादी प्रकाशनों पर प्रति-बंध लगाने की है जिनमें निरी गंदगी का चित्रण होता है। **रॉथ वि० यूनाइटेड स्टेट्स**, 354 यू० एस० 476।

भाषण को चुप करा देने के पक्ष में दूसरा कारण यह दिया जाता है कि उससे शान्ति-भंग की उत्तेजना मिल सकती है। सार्वजनिक वक्ता प्रायः अतिशयोक्तियाँ करते हैं और अतिवादी आरोप लगाते हैं। 'सोप बॉक्स आरेटरी' जैसे सड़कों, पार्कों आदि में होने वाले भाषणों में प्रायः श्रोता-वर्ग द्वारा संकोच में डालने वाले प्रश्न पूछने या हँसी उड़ाने की घटनाएँ हो जाती हैं। ऐसी स्थिति में पुलिस और अन्य अधिकारियों का कर्त्तव्य होता है कि वक्ता की रक्षा करें। केवल ऐसी बहुत ही आत्यन्तिक स्थितियों में वक्ता का मुँह बंद करना चाहिए जबकि बिल्कुल साफ हो कि ऐसा किए बिना दंगा हो जाएगा, या पाया जाय कि वक्ता अन्य व्यक्तियों के प्रति हिंसा भड़का रहा है। देखिए **फीनर वि० न्यूयार्क**, 340 यू० एस० 315; **ब्यूहर्नेज वि० इल्योनायस**, 343 यू० एस 250।

लन्दन में हाइड पार्क एक ऐसी जगह मानी जाती है जहाँ वक्ता लोग अपनी भड़ांस निकाल सकते हैं। अमेरिका में भी हाइड पार्क की परम्परा है। गली के नुक्कड़ों पर बोलनेवाले वक्ता अपनी वास्तविक या काल्पनिक शिकायतों के बारे में कड़े से कड़े और अनुचित से अनुचित शब्दों में अमेरिकी सरकार के बड़े से बड़े व्यक्तियों की निन्दा कर सकते हैं। और फिर भी जब तक वे तुरन्त कोई हिंसात्मक कार्रवाई करने की प्रेरणा न दें वे मुकदमा चलाए जाने से सुरक्षित रहते हैं।

आजकल, इस क्षेत्र की सबसे प्रमुख समस्याएँ हैं कम्युनिस्टों के बोलने और अपने सिद्धान्त की शिक्षा देने के अधिकार के सम्बन्ध में। सभी सरकारों को सीधे और आसन्न खतरों से अपनी रक्षा करने का अधिकार होता है। क्या समस्त स्वतंत्र संसार में विद्वानों और छात्रों द्वारा साम्यवादी-सिद्धान्त विषयक मूल रचनाओं—मार्क्स, लेनिन और स्टालिन की रचनाओं—का अध्ययन किया जा सकता है ? कम्युनिस्ट लोग औरों को अपने सिद्धान्त की शिक्षा देने के लिए क़ानून का विरोध किए बगैर इन पुस्तकों का उपयोग कहाँ तक कर सकते हैं ? निश्चय ही विद्वानों के लिए साम्यवादी पुस्तकें पढ़ना अनुमत्य है ताकि वे उन्हें समझ सकें या उनका विरोध कर सकें। किन्तु क्या कम्युनिस्ट संघटनों द्वारा अन्य साम्यवादियों को शिक्षा देने के लिए इन पुस्तकों के उपयोग को कांग्रेस अवैध घोषित कर सकती है ? न्यायालयों ने इस अंतिम प्रश्न का उत्तर 'हाँ' में दिया है यद्यपि इन शिक्षाओं द्वारा, हमारे स्थानीय या राष्ट्रीय स्तर की सरकार पर कम्युनिस्टों द्वारा अधिकार कर लिए जाने की कोई आसन्न संभावना नहीं थी। **डेनिस वि० यूनाइटेड स्टेट्स**, 341, यू० एस० 494। मेरे खयाल से, यह राय ज़ाहिर करने से न्यायालयों ने **ह्विटने वि० कैलिफोर्निया** 274 यू० एस० 357, 377 में न्यायमूर्ति ब्रैण्डीज़ द्वारा प्रतिपादित इस सिद्धान्त को मानने से इन्कार कर दिया है कि,

> यदि चर्चा द्वारा झूठ और भ्रम दूर करने, और शिक्षा की प्रक्रिया द्वारा बुराई से बचने के लिए काफी समय हो तो जो इलाज अपनाया जाना चाहिए वह है और अधिक भाषण, न कि जबरदस्ती थोपी हुई चुप्पी।

मैडीसन का विचार था कि प्रथम संशोधन से स्पष्ट है कि संविधान ने भाषण या प्रेस के बारे में संघीय सरकार को 'कोई भी शक्ति' नहीं सौंपी है। समाज के स्वास्थ्य के लिए स्वतंत्र भाषण और स्वतंत्र प्रेस के महत्त्व ने ही न्यायालयों को यह घोषित करने के लिए प्रेरित किया है कि प्रथम संशोधन की गारंटी चौदहवें संशोधन की 'उचित-प्रक्रिया धारा' के कारण, राज्यों की एतद्विषयक कार्यवाही पर भी लागू होती है। **गिटलो वि० न्यूयार्क**, 268 यू० एस० 652, 666।

एकत्र होने या संघटन करने की स्वतंत्रता

अगर व्यक्ति को, अपना मत व्यक्त करने के उद्देश्य से शान्तिपूर्ण सभा आयोजित करने के लिए दण्डित किया जा सके; या अपने या एक समूह के विचारों से औरों को सहमत करने, उन पर चर्चा करने या उन्हें पुष्ट करने के लिए किसी संघटन में शामिल होने से उसे रोका जा सके तो भाषण की स्वतंत्रता का व्यावहारिक मूल्य कुछ भी नहीं रह जाएगा। अतः प्रथम संशोधन द्वारा सुरक्षित किया गया, शांतिपूर्वक एकत्र होने और संगठित होने का अधिकार उतना ही मूलभूत है जितना कि भाषण की स्वतंत्रता का अधिकार।

डी जोंग वि० आरेगोन, 299 यू० एस० 353 में, जिसमें कि सरकार ने सार्वजनिक रुचि के मामलों पर बहस करने के लिए सार्वजनिक सभा करने पर कम्युनिस्टों को दण्ड देने का यत्न किया था, न्यायालय ने घोषित किया था कि यह (एकत्र और संघटित होने का) अधिकार सब व्यक्तियों को प्राप्त है। न्यायालय ने संकेत किया कि एकत्र होने के अधिकार का

दुरुपयोग, हिंसा या अपराध के लिए उकसा कर किया जा सकता है, और उस हालत में, ऐसे आचरण के विरुद्ध उपयुक्त कार्यवाही करने में सरकार स्वतंत्र है। किन्तु वैध चर्चा के लिए एकत्र होने को सिर्फ इसीलिए अपराध नहीं घोषित किया जा सकता कि उस अधिकार का प्रयोग करने वाले लोगों से घृणा की जाती है या वे लोकप्रिय नहीं हैं। न्यायालय ने कहा, "अगर उन एकत्र होने वाले लोगों ने कहीं और अपराध किए हैं, यदि वे शांति और सार्वजनिक व्यवस्था के विरुद्ध षड्यंत्र कर चुके हैं या कर रहे हैं तो उन पर अपने उस षड्यंत्र के लिए या अन्य वैध कानूनों के भंग के लिए मुकदमा चलाया जा सकता है। लेकिन यह बिलकुल ही दूसरी बात है कि सरकार उन पर इस प्रकार के अपराधों के लिए मुकदमा चलाने के बजाय एक शांतिपूर्ण सभा और एक वैध सार्वजनिक चर्चा में भाग लेने को ही आपराधिक आरोप का आधार बनाए।"

यह सच है कि लोगों का एक जगह एकत्र होना प्रायः ऐसी समस्याएँ खड़ी कर देता है, जिन पर शांति कानून और व्यवस्था की दृष्टि से कुछ नियंत्रण होना चाहिए। उदाहरण के लिए, किसी व्यक्ति को किसी व्यस्त राजमार्ग के बीच में सभा बुलाने की अनुमति नहीं दी जा सकती। शोर, दंगों और यातायात के ठप्प होने के मामलों का नियमन किया जा सकता है जब तक कि यह नियमन अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का गला घोंटने का बहाना न बना लिया जाय।

कोई व्यक्ति क्या पढ़ता है या क्या लिखता है इस पर सरकार को कोई निययंण नहीं लगाना चाहिए। 'कोई व्यक्ति क्या सोचता है' जैसे मामलों में सरकार के दखल का कोई काम नहीं है। यदि किसी आदमी को अपनी पढ़ने की आदतें प्रकट करने को बाध्य किया जा सके तो अप्रत्यक्ष रूप से उसके विचार नियंत्रित किए जा सकेंगे। शीघ्र ही सरकार का प्रतिनिधि हर पढ़ने वाले के कंधे पर से झाँकता दीखने लगेगा। सरकार

की छाया उस समस्त साहित्य और उस साहित्य के पाठकों पर दिखलाई पड़ने लगेगी, जिससे प्रशासन सहमत नहीं है। किसी व्यक्ति के वैयक्तिक विचारों की गोपनीयता के अधिकार में, वे सब पुस्तकें और पत्रिकाएँ जिन्हें वह पढ़ता है, वे सब मित्रताएँ जिन्हें वह पैदा करता है और वे सब समूह जिनका एक अंग वह बनता है, शामिल हैं। सरकार इन बातों के नियमन के लिए कोई कानून नहीं बना सकती और इसीलिए इनके बारे में पूछ-ताछ करने का उसे वैध अधिकार नहीं है। किसी प्रकाशक को अपने प्रकाशनों के ग्राहकों का परिचय बतलाने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता क्योंकि ऐसा करना सिर्फ उसके ही नहीं बल्कि उसके पाठक के भी अभिव्यक्ति-स्वातंत्र्य का अतिलंघन होगा। देखिए **यू० एस० वि० रूमली,** 345 यू० एस० 41, 56। इसी कारण से, सरकार को यह भी अधिकार नहीं है कि किसी व्यक्ति को, वैध प्रयोजनों वाले किसी समूह की अपनी सदस्यता को प्रकट करने के लिए बाध्य करे, और न ही स्वयं उन संघटनों को अपनी सदस्यता-सूचियाँ प्रकट करने के लिए बाध्य किया जा सकता है। कुछ बार, अ-लोकप्रिय विचारों का प्रतिपादन करने वाले किसी संघटन के निरन्तर-अस्तित्व के लिए, गोपनीयता और गुमनामी अनिवार्य हो सकती है। ऐसे मामलों में यह स्पष्ट है कि सरकार को यह गुमनामी नष्ट करने का अधिकार नहीं होना चाहिए क्योंकि इस प्रकार की शक्ति, स्वयं उस समूह को नष्ट करने की शक्ति के समकक्ष होगी। देखिए **एन० ए० सी० पी० वि० अलबामा** 357, यू० एस० 449। किन्तु जहाँ प्राकट्य से किसी प्रकार के संकट का खतरा भी न हो वहाँ भी, प्रथम संशोधन के कारण, किसी व्यक्ति के विश्वासों की ही तरह उसके सहयोगी, उसका चर्च, उसके मत-विषयक सम्बन्ध सरकार की शक्ति से बाहर हैं। जिस सरकार को किसी व्यक्ति के सहयोगी चुनने का अधिकार नहीं है उसे उस व्यक्ति को इस बात के लिए दण्ड देने का भी अधिकार नहीं है कि वह उन्हें गुप्त क्यों रखता है।

धर्म और अंत:करण की स्वतंत्रता तथा एकांतता का अधिकार

कोई व्यक्ति क्या सोचता है इससे समाज को किसी प्रकार की हानि की सीमित-संभावना भी नहीं है। इसलिए मनुष्य के विश्वास, उसके विचार, पूरी तरह सरकारी-नियमन से मुक्त होने चाहिएँ। फिर भी एक समय था जब कि बादशाह की हत्या के विचार को सोचने मात्र के लिए, इंग्लैण्ड में लोगों को सज़ा दी जा सकती थी। इंग्लैण्ड में तेरहवीं से सत्रहवीं शताब्दी तक धार्मिक न्यायालयों को और बाद में चेम्बर के राज-न्यायालय को यह शक्ति प्राप्त थी कि यातना द्वारा या किसी और ढंग से व्यक्ति के धार्मिक विचारों का पता लगाएँ और इस तरह विधर्मियों और बादशाह के प्रति गैर-वफ़ादार लोगों को छाँट सकें और दण्ड दे सकें। आरम्भिक अंग्रेज-बादशाह चर्च के प्रधान और वैधानिक शासक की हैसियत से अपनी समस्त प्रजा को राजा के प्रति वफ़ादारी की शपथें और परीक्षणात्मक शपथें लेने के लिए बाध्य किया करते थे।

हेनरी अष्टम ने शपथ लिवाई थी (जिसे उसकी प्रजा का हर व्यक्ति लेने के लिए बाध्य था) जिसमें 'रोम के समुद्र की शक्ति, प्राधिकार और क्षेत्राधिकार' के विरोध की घोषणा करनी होती थी।

कुछ ही समय बाद रानी बनने वाली मेरी ने एक कानून बनाया जिसमें यह शपथ 'बिलकुल अवैध' घोषित की गयी।

एक शपथ जिसे लेने के लिए रानी एलिज़ाबेथ ने अपने नागरिकों को बाध्य किया था अंशत: इस प्रकार थी, "मैं अपने अंत:करण से पूरी तरह यह सत्यापित और घोषित करता हूँ कि महारानी ही इस राज्य की और आध्यात्मिक और धार्मिक तथा सांसारिक बातों और मामलों की सर्वोच्च प्रशासिका है।"

जेम्स प्रथम ने एक शपथ आवश्यक की थी जिसमें बादशाह के प्रति निष्ठा की घोषणा करने के बाद यह भी कहना होता था "और मेरा विश्वास है,

और मैं अंतःकरण से यह संकल्प करता हूँ कि पोप या किसी और व्यक्ति को इनमें से किसी शपथ या उसके किसी अंश को विमुक्त करने का अधिकार नहीं है। मैं स्वीकार करता हूँ कि यह शपथ मुझे उपयुक्त और पूर्ण प्राधिकारी द्वारा दिलाई गई है और इसके विरुद्ध मिलने वाले सभी क्षमा-दानों और विमुक्तियों का परित्याग करता हूँ।"

इस देश में भी द्वितीय महायुद्ध के बाद से निष्ठा की शपथों की बाढ़ आई रही है। संघीय और राज्य-पदों के लिए, और म्युनिसिपल पदों के लिए भी अनेक प्रकार की निष्ठा-शपथें अपनायी गईं। इससे आगे मत-दाताओं, भवन-निर्माण प्रायोजनाओं के व्यक्तियों, शिक्षकों, सार्वजनिक कल्याण कार्यों के लाभान्वितों, केन्द्रीय पदाधिकारियों, करों से छूट चाहने वालों (जैसे गिरजे और बुजुर्ग) और यहाँ तक कि बॉक्सिग करने वालों और कुश्ती लड़ने वालों तक से शपथें लिवाई जाती थीं।

हमारे संविधान में यह स्पष्ट-सा हो गया है कि मनुष्य के विश्वास सरकार के क्षेत्र में नहीं हैं। युद्ध-काल में शत्रु से सहानुभूति तक देश-द्रोहात्मक या दण्डनीय नहीं मानी गई है—जब तक कि कोई ऐसा कार्य न किया जाय जो कि शत्रु को सहायक हो। संविधान के शब्दों में देशद्रोह है शत्रु को "मदद या सुविधा देना।"

विचार की स्वतंत्रता से जुड़ी हुई ही है अंतःकरण की स्वतंत्रता और एकांतता का अधिकार—अकेले छोड़ दिये जाने का अधिकार। जेफ़रसन ने लॉक से इस बात में सहमति प्रकट की थी कि ईसाइयों, यहूदियों या मुसलमानों की तरह काफ़िरों या सूफियों को भी सिर्फ उनके धर्म के कारण राज्य के "नागरिक अधिकारों" से वंचित नहीं किया जाना चाहिए। उसने 1776 में लिखा था, "भिन्न मत वालों के लिए सहिष्णुता के अभाव ने ही धर्म के नाम पर झगड़ों और युद्धों को जन्म दिया है।" उसका विचार था कि कैथोलिकों, हिन्दुओं, यहूदियों, क्वेकरों और मुसलमानों को भी सरकारी

पद पाने का उतना ही अधिकार होना चाहिए जितना कि प्रोटेस्टेण्टों को। इसीलिए संविधान में—"किसी पद या सार्वजनिक न्यास (ट्रस्ट)" के लिए —किसी "धार्मिक परीक्षा" को योग्यता बनाने की मनाही है। भाषण और धर्म की स्वतंत्रता की गारंटियाँ विचार और अंतःकरण की भी रक्षा करती हैं। प्रथम संशोधन द्वारा, धार्मिक स्वतंत्रता को संघीय सरकार की कार्य-वाहियों से सुरक्षा मिल गई है; और अब यह पूरी तरह सुनिश्चित हो चुका है कि चौदहवें संशोधन की "उचित प्रक्रिया धारा" द्वारा यह संरक्षण राज्य-सरकारों की कार्यवाही के विरुद्ध भी प्राप्त हो गया है। **मरडॉक वि० पेनसिलवेनिया**, 319 यू० एस० 105।

झण्डे को सलाम करने से इनकार करने के स्कूली बच्चों के अधिकार के एक मामले में इस बात का उदाहरण मिलता है। प्रोटेस्टेण्ट ईसाइयों का एक सम्प्रदाय "जेहोवाज़ विटनेसेज़", एग्ज़ोडस, अध्याय 20, पद्य 4 और 5 में शब्दशः विश्वास करता है जिसमें कहा गया है कि "तू अपने लिए कोई मूर्ति नहीं गढ़ेगा।...न तू उनके सामने झुकेगा, न उनकी सेवा करेगा। ......" उनका विश्वास है कि झण्डे को सलाम करने के लिए हाथ उठाना एक मूर्ति के सम्मुख झुकना या उसकी सेवा करना है, जोकि जेहोवा की शिक्षा के विरुद्ध है। उनका यह दृढ़ विश्वास है और झण्डे को सलामी देने से इनकार करने के कारण अनेक विद्यार्थियों को पब्लिक स्कूलों से निकाल दिया गया। न्यायालय ने निर्णय दिया कि किसी राज्य के प्राधिकारी किसी छात्र को, उसकी इच्छा के विरुद्ध, झण्डे को सलामी देने के लिए बाध्य नहीं कर सकते। **बोर्ड आफ एजूकेशन वि० बार्नेट**, 319 यू० एस० 624। इसमें कहा गया है—

हमारे संवैधानिक तारा-समूह में यदि कोई ध्रुव तारा है तो यही कि कोई भी अधिकारी, चाहे वह बड़ा हो कि छोटा, कोई ऐसी बात तय नहीं कर सकता जो कि राजनीति, राष्ट्रीयता,

धर्म या मत-विषयक अन्य मामलों में दृढ़ाग्रह हो, और न ही वह नागरिकों को उसमें शाब्दिक या क्रियात्मक निष्ठा व्यक्त करने के लिए बाध्य कर सकता है।

यह बात ज़रूर है कि ऐसा लगता है कि दुर्भाग्यवश, हाल के कुछ वर्षों में हम इस 'ध्रुव तारे' को भूल गये हैं। पिछले बीस वर्षों में विश्वासों और मतों के बारे में पूछताछ करने और बहुमत से मेल खाने वाले विचार न रखने वालों को दण्ड देने की प्रवृत्ति बराबर बढ़ती हुई पायी गई है।

निष्ठा कार्यक्रम

1884 से 1939 तक अमेरिकी सरकार ने अधिकारी और कर्मचारी नियुक्त करने के विषय में यह व्यवस्था कर रखी थी कि किसी आवेदनकर्ता या कर्मचारी के "राजनैतिक या धार्मिक मतों या सम्बन्धों" के विषय में कोई पूछताछ नहीं की जाएगी। 1939 में, ज़रूर, सरकार ने यह आवश्यक कर दिया कि नौकरी का प्रार्थी या कर्मचारी यह शपथ ले कि वह किसी ऐसे राजनैतिक दल या संघटन का सदस्य नहीं है जो कि सरकार को उलटने का मत प्रतिपादित करता हो। इसके लिए केन्द्रीय कर्मचारियों और नौकरी के प्रार्थियों के "चरित्र, निष्ठा और सम्बन्धों" के विषय में जाँच की विस्तृत क्रियाविधियाँ बनीं। प्रतिरक्षा-अभिकरणों ने, प्रतिरक्षा कार्यों में लगे ठेकेदारों के कर्मचारियों के विषय में भी ऐसी ही क्रियाविधियाँ स्थापित कीं। इन ठेकेदारों में देश के अधिकांश बड़े निगम और दर्जनों छोटे निगम भी शामिल हैं। राज्य सरकारों, स्कूल बोर्डों, और गैर-सरकारी नियोजकों ने भी ऐसी ही क्रियाविधियाँ अपनाईं। महा-न्यायवादी (अटार्नी जनरल) ने 280 ऐसे संगठनों की सूची बनायी जो विध्वंसक माने जाते थे और जिनकी सदस्यता संदेहजनक मानी जाती थी।

संयुक्त राज्य को तोड़-फोड़ से अपनी रक्षा का अधिकार निर्विवाद रूप से प्राप्त है। नियोजक होने के नाते उसे कर्मचारियों के संतोषजनक

होने का सुनिश्चय करने का भी पूरा अधिकार है। नीति-निर्धारक पदों के बारे में, निश्चय ही, इसमें यह अधिकार भी शामिल है कि इस बात का पूरा निश्चय हो कि वह कर्मचारी सरकार के कार्यक्रम और उद्देश्यों से सहानुभूति रखता है। किन्तु, जो निष्ठा कार्यक्रम अपनाए गए थे, उनसे, स्वतंत्रता को गम्भीर खतरे भी थे। जैसा कि इंग्लैण्ड में होता था, यहाँ, व्यक्ति को सिर्फ नाजुक कामों के बजाय अन्य कामों पर नहीं लगा दिया जाता था। यह निश्चय करने के लिए सुनवाइयों की एक व्यवस्था कायम की गई कि कौन वफ़ादार है और कौन नहीं। इसके गम्भीर परिणाम हुए।

सर्वप्रथम तो, अनिष्ठा के आधार पर किसी कर्मचारी की बर्खास्तगी या किसी व्यक्ति के नौकर न रखे जाने में, उस विशेष एक कार्य के न मिलने के अतिरिक्त भी बहुत सी बातें शामिल थीं। इससे वह व्यक्ति सरकारी विश्वास के अयोग्य घोषित हो जाता था, यह उसे हमेशा के लिए सरकारी सेवा के लिए अयोग्य बना सकता था; इससे उसकी ख्याति को भी गहरा धक्का पहुँचता था। जैसा कि 1952 में सर्वोच्च न्यायालय ने कहा, निष्ठा के आधार पर पदच्युति, "बदनामी का बैज" ही थी। **वीमेन वि० अपडेग्राफ**, 344 यू० एस० 183।

और फिर, निष्ठा की जाँच की अधिकांश व्यवस्थाओं में, इन अभिकरणों का संचालन करने वाले नियमों के अधीन, अभियुक्त को वे कोई भी अधिकार प्राप्त नहीं होते थे जो कि एक न्यायालय के मुकदमे में प्राप्त होते हैं। यद्यपि वह किसी व्यक्ति द्वारा अनिष्ठा के लिए निन्दित होता था फिर भी उसे आरोप-कर्ता के सामने आने और उससे जिरह करने या वह कौन है यह जानने तक का अधिकार नहीं होता था। इस व्यवस्था में अनुत्तरदायित्वपूर्ण आरोप लगाए जाने को प्रोत्साहन मिलता था, जिन्हें असिद्ध करने का अभियुक्त को कोई वास्तविक अवसर ही नहीं मिलता था। उदाहरण के लिए, एक मामले में एक यूनियन की एक महिला-अफसर का

कहना था कि उसके विरुद्ध आरोप, यूनियन के उन सदस्यों ने लगाए हैं जो यूनियन के कुछ मुद्दों पर उसके मत का विरोध करते हैं। यह सच था कि नहीं इस बात को न तो वह कर्मचारिणी कभी जान सकी और न उसके मामले की सुनवाई करने वाला बोर्ड, क्योंकि उसपर अनिष्ठा का आरोप लगाने वाले व्यक्तियों के नाम न कभी उसे बताये गए न बोर्ड को।

दूसरे, इन मामलों में मुद्दा यह तो होता न था कि उस कर्मचारी ने अनिष्ठा या विध्वंसात्मकता का कोई कार्य किया है कि नहीं, बल्कि मुद्दा यह होता था कि वह भविष्य में इस प्रकार का कोई कार्य कर सकता है कि नहीं ? इसी लिए प्रायः सुनवाइयाँ प्रवृत्तियों, विश्वासों और मतों के विषय में होती थीं। इस दिशा में वे कहाँ तक प्रगति कर पाती थीं यह अधिकतर इस बात पर निर्भर मालूम होता है कि बोर्ड के सदस्य या सुनवाई करने वाले अफ़सर कहाँ तक आत्म-संयम से काम लेते थे। कुछ लोग 'ख़तरनाक विचार' व्यक्त करने के लिए लोगों को दण्डित करने में बहुत आगे बढ़ जाते थे। अन्य अवसरों पर, सरकार से व्यापार करने वाले नियोजक लोग, निष्ठा कार्यक्रमों का उपयोग ऐसे लोगों से छुटकारा पाने के लिए करते थे जिन्हें कि वे और तरह से नौकरी से हटा न सकते थे। इनमें से अधिकांश मामले कभी भी न्यायालयों में नहीं पहुँचते थे क्योंकि लम्बी मुकदमेबाज़ी में फंसने के लिए न तो कर्मचारियों के पास पैसा ही होता था न धैर्य ही। जब कभी ये मामले न्यायालयों में पहुँच जाते थे तो वे, इन मामलों की जाँच करने वाले सरकारी अभिकरणों को कुछ संयत कर देते थे। इस प्रकार किसी व्यक्ति को अपने काम से सिर्फ इसीलिए नहीं हटाया जा सकता कि किसी समय किसी तथाकथित विध्वंसात्मक व्यक्ति से उसका कोई सम्बन्ध था।

तीसरे, मनुष्यों के विश्वासों की इस तरह की जाँच की व्यवस्था के कारण स्वतंत्र विचारों के व्यक्ति सरकारी पद स्वीकार करने के लिए हतोत्साहित हुए हैं, और वे लाग भी हतोत्साहित हुए हैं जो परम्परा से भिन्न

विचार व्यक्त करके सरकार का काम करना चाहते हैं। जैसा कि विदेश-सेवा के एक व्यक्ति ने कहा है, "यह तो ऐसा हुआ कि जैसे मस्तिष्कहीन व्यक्ति की मन्द-बुद्धिता ही आदर्श बन गई हो।" सरकारी कर्मचारियों में मौलिकता और स्वतंत्र विचार का यह हतोत्साहन हमारी राष्ट्रीय शक्ति के लिए बहुत विनाशक सिद्ध हो सकता है।

निष्ठा-कार्यक्रमों के विकास के साथ-साथ हर प्रकार के पदों के लिए निष्ठा-शपथों—कसौटी की शपथों—का प्रयोग बढ़ता गया है। जो लोग इस प्रकार की शपथें लेने से इनकार करें उन्हें ऐसे काम और पेशे करने के अधिकार से भी वंचित कर दिया जाता है जैसे वकील, डाक्टर, औषधि-विक्रेता, पशु-चिकित्सक, सबवे कण्डक्टर, नलसाज़, कबाड़ी आदि। वे सार्वजनिक आवासन, वृद्धावस्था पेंशन, करों से छूट, बेकारी के बीमे और अन्य लाभों के लिए भी अयोग्य घोषित कर दिए जाते हैं।

इसमें संदेह है कि ये शपथें कभी वास्तविक विध्वंसकों को पकड़ भी पाती हैं। निश्चय ही, किसी विदेशी शत्रु-शक्ति का पक्का एजेण्ट झूठी शपथ लेने में कभी नहीं हिचकेगा, अगर इससे उसका काम सधता हो। इतिहास बताता है कि शरारत करने पर उतारू कोई व्यक्ति, कोई भी शपथ लेने में नहीं हिचकता और झूठी शपथ के मुकदमे में फंसने का खतरा मोल लेता रहता है। यह तो "संकोच" वाले निष्ठावान व्यक्ति ही होते हैं जो विरोध करते हैं। वर्षों पहले बेंजामिन फ्रेंकलिन ने कहा था कि निष्ठा की शपथें तो "झूठों का आखरी आसरा है।"

सरकार को अपने कर्मचारियों से अपनी रक्षा का अधिकार है। कोई सरकारी पद स्वीकार करने वाले व्यक्ति से स्पष्ट रूप से यह शपथ ली जा सकती है वह संविधान की हिमायत करेगा और उसकी रक्षा करेगा, क्योंकि यह संविधान ही है जिसके मातहत वह काम और परिश्रम करता है। किन्तु निष्ठा-शपथों का कार्यक्रम इस लक्ष्य से बहुत आगे जाता है।

हमारे यहाँ ऐसी निष्ठा-शपथें आवश्यक हैं जिनका किसी विश्वसनीय पद के लिए किसी व्यक्ति की वर्तमान योग्यता से कोई सम्बन्ध नहीं है । इसका एक अच्छा उदाहरण है कैलिफोर्निया का एक अधिनियम जिसके द्वारा ऐसे सब लोग करों से छूट से वंचित कर दिए गए हैं जो यह शपथ न लें कि वे संयुक्त राज्य सरकार को शक्ति या हिंसा द्वारा उलटने का पक्ष-समर्थन नहीं कर रहे हैं । इस शपथ का कुछ चर्चों और अन्य व्यक्तियों ने विरोध किया क्योंकि वे किसी विश्वास या सिद्धान्त का जबरन समर्थन कराये जाने के विरुद्ध थे । सर्वोच्च न्यायालय ने इस अधिनियम को यह कहकर संविधान के विरुद्ध घोषित कर दिया कि यह मतों और विश्वासों के विरुद्ध अन्याय-पूर्ण दण्ड है । **स्पीजर वि० रैण्डाल, 357 यू० एस०, 513** ।

निष्ठा-शपथों का एक और गंभीर दोष यह है कि अक्सर ये भूतपूर्व विश्वासों और अभिव्यक्तियों के कारण अयोग्यताएँ लागू करते हैं । गृह-युद्ध के बाद, किसी कर्मचारी या पेशे के व्यक्तियों से लिवाई जाने वाली इस आशय की शपथ कि उसने भूतकाल में राज्य-मण्डल (कानफेडरेशन) का समर्थन नहीं किया है, इस आधार पर असंवैधानिक घोषित कर दी गई थी कि यह अतीत के आचरण के लिए नया दण्ड विहित करती है—जो कि संविधान की घटनोत्तर (एक्स पोस्ट फैक्टो) कानूनों, और कालुष्य विधेयकों (बिल्स आफ अटेण्डर) की वर्जना के विरुद्ध है । **कमिंग्ज वि० मिसूरी 4 वाल 277** । फिर भी इस आशय की शपथें कि कोई व्यक्ति भूतकाल में किसी ऐसी संस्था का सदस्य नहीं रहा है जोकि सरकार को गैर-कानूनी तौर से उलटने का प्रचार करती हो, हाल के वर्षों में बहुत प्रचलित हुई हैं ।

विधानमंडलीय जाँचें

इन निष्ठा विषयक जाँचों और सरकार की कार्यपालिका-शाखाओं द्वारा आवश्यक बनाई गई शपथों से ही सम्बद्ध है "विध्वंसात्मक गति-विधियों" या "अन-अमेरीकीवादिता" के लिए की जाने वाली असंख्य विधान-

मण्डलीय जाँचें। इस प्रकार की जाँचों में सरकारी कर्मचारियों और निजी व्यक्तियों के, दोनों ही के विश्वासों, कथनों और सम्बन्धों की जाँच सम्मिलित रहती है। बार्थ ने **'गवर्नमेंट बाइ इन्वेस्टीगेशन'** और टेलर ने **'ग्रैण्ड इनक्वेस्ट'** में दिखलाया है कि किस तरह इनमें से कुछ जाँचें, जाँचकर्त्ताओं से भिन्न मत रखने वालों को, विरोधी प्रचार द्वारा, दण्डित करने के काम में लाई गई हैं। कई बार जाँच-समितियों के सदस्यों ने गवाहों से कहा है कि उनकी सुनवाई "देश के सर्वोत्तम न्यायालय, जनमत के न्यायालय" में हो रही है। यह अनुमत्य नहीं है। **वाटकिन्स वि० युनाइटेड स्टेट्स**, 354 यू० एस० 178, 200।

कुछ बार, ऐसा भी हुआ है कि व्यक्तियों के विरुद्ध लगाए गए अनुत्तर-दायित्वपूर्ण आरोपों का अधिकतम प्रचार करके, और उन व्यक्तियों को अभियोगियों से जिरह करने या अपनी सफाई के लिए उतना ही प्रचार करने का अवसर न देकर, जाँचें अन्यायपूर्ण ढंग से की गई हैं। कितनी ही बार इन समितियों ने गवाहों से ऐसे अन्य व्यक्तियों के नाम बताने और उनकी गतिविधियों की चर्चा करने को कहा है, जिनसे अतीत में उनका सम्बन्ध रहा है और जो अपनी ख्याति की रक्षा करने के लिए उस समय सुनवाई के कमरे में उपस्थित नहीं थे। इस तरह के सब मामलों में गवाह को दो में से एक बात चुननी पड़ती है कि या तो उत्तर दे और अपने-आपको या अपने मित्रों को विरोधी-प्रचार का शिकार बनाए और अभियोग-पक्ष के सम्मुख झूठी गवाही दे जिसमें उसे जूरी को यह विश्वास दिलाना पड़े कि उसका उत्तर सही है, अथवा उत्तर देने से इनकार कर दे और जाँच कमेटी की मानहानि के दण्ड का ख़तरा मोल ले।

विधानमंडलीय जाँचें तब वास्तव में एक वैध और आवश्यक कर्त्तव्य पूरा करती हैं जब उनका सम्बन्ध या तो यह तय करने से होता है कि कानून सही रूप से लागू किए जा रहे हैं कि नहीं अथवा, ऐसी स्थितियों का पता

लगाने से होता है जिनमें विधायक-कार्यवाही आवश्यक होती है। किन्तु जब यह जाँच वैयक्तिक विश्वासों के क्षेत्र में प्रवेश करती है, तो यह नागरिक के एकांतता के अधिकार पर आक्रमण बन जाती है। इस समय, अदालतों से आशा की जाती है कि वे, उत्तर देने से इनकार करके, जाँच-समिति की मानहानि के लिए जेल जाने से, व्यक्ति को बचाएँगी। किन्तु, अदालतें हमेशा ही बहुत विश्वसनीय संरक्षक सिद्ध नहीं होतीं। 1959 में अपहौज़ नामक एक व्यक्ति न्यू हैम्पशायर में इसलिए जेल भेजा गया कि उसने राज्याधिकारियों को उन व्यक्तियों की सूची देने से इनकार कर दिया जो उसके साथ एक सम्मेलन में शामिल हुए थे। **अपहौज वि० वाइमैन,** 360 यू० एस० 72। यह उसकी "आत्मा" के विरुद्ध था। वह अपराधी नहीं था बल्कि एक निष्ठावान् धार्मिक व्यक्ति था जिसका यह विश्वास था कि सरकार को इससे कोई मतलब नहीं होना चाहिए कि मैंने किससे क्या चर्चा की है।

किसी गवाह का, अपने विश्वासों, अभिव्यक्तियों और सम्बन्धों के आधार पर शत्रुता और प्रताड़ना का शिकार होना, एक प्रकार से उसके विश्वास और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर प्रतिबन्ध, और आक्रमण है। इस प्रकार की जाँचों से लोगों को सिर्फ अत्यन्त पारम्परिक विचार व्यक्त करने और रखने की प्रेरणा मिली ताकि वे जाँच की अरुचिकरता से अपनी रक्षा कर सकें। न्यायालयों ने जाँच करने वाली समितियों पर कुछ बंधन लगाए हैं। इस प्रकार, वे किसी ऐसी समिति की मानहानि के लिए दण्ड देने से इनकार कर देते हैं, जिसका प्राधिकार इतना अस्पष्ट हो कि एक विशेष प्रश्न पूछे जाने पर गवाह के पास यह जानने का कोई आधार ही न हो कि वह प्रश्न समिति को सौंपी गई जाँच से क्यों और कैसे सम्बद्ध है। **वाटकिन्स वि० यूनाइटेड स्टेट्स,** 354 यू० एस० 178। एक आत्यन्तिक मामला लें तो यह कहा जा सकता है कि कम्युनिस्टों की विध्वंसक कार्यवाहियों की जाँच

के लिए अधिकृत समिति के समक्ष कोई गवाह, मौसम के विषय में पूछे गए प्रश्नों का उत्तर देने से इनकार करने पर, समिति की मानहानि के लिए दण्डित नहीं किया जा सकता है। यद्यपि अदालतें इन मामलों में नागरिक की कुछ रक्षा करती हैं फिर भी विधानमण्डलों का आत्म-संयम और अन्ततः जनमत ही समिति के सदस्यों के उत्साहातिरेक पर सर्वोत्तम अंकुश हैं।

भेदमूलक व्यवहार से स्वतंत्रता

जॉन लॉक ने विधि के अधीन समान-न्याय का आदर्श इस प्रकार बतलाया था, "लोगों का शासन प्रवर्तित एवं प्रस्थापित कानूनों द्वारा होना चाहिए, जो विशिष्ट मामलों में परिवर्तित न होते हों वल्कि जिनके नियम अमीर और गरीब, दरबार के प्रिय व्यक्ति और हल चलाने वाले ग्रामीण के लिए एक-से हों।" **ट्रीटाइज आफ सिविल गवर्नमेंट** (1690)। फिर भी सम्पूर्ण इतिहास में जनता के कुछ वर्गों को या तो कुछ विशेष सुविधाएँ मिली हुई रही हैं या उन पर कुछ विशेष भार रहे हैं। प्राचीन एथेंस का प्रजातंत्र दास-समाज पर आधृत था। मध्यकाल में कृषकों और सामंतों के कानूनी अधिकार अत्यधिक भिन्न थे। अभी पिछले दिनों तक, भारत, जाति-व्यवस्था के अनुसार संघटित था, जहाँ हर जाति के विशेष अधिकार या कर्त्तव्य होते थे। सोवियत रूस में, वर्गहीन-समाज के उसके सारे दावों के बावजूद, पार्टी और नौकरशाही के सदस्यों के विभिन्न दल पैदा हो गए हैं जिन्हें तरजीही व्यवहार प्राप्त है।

कुछ बार ये वर्ग-प्रणाली जातीयता पर आधृत होती हैं जैसे हिटलर के जर्मनी या दक्षिण अफ्रीका संघ में। हमने स्वयं अपने देश में इस प्रकार के भेदभाव देखे हैं। राष्ट्र के रूप में हमारे अस्तित्व के प्रथम सौ वर्षों के अधिकांश में, राष्ट्र के एक भाग में दासों का स्वामित्व स्वीकार किया जाता था। ड्रेड स्काट के मामले में (19 हाव० 393) अदालत ने निर्णय

दिया था कि ये लोग नागरिक नहीं बल्कि केवल सम्पत्ति हैं और कांग्रेस किसी प्रदेश में दास-प्रथा की मनाही नहीं कर सकती। गृह-युद्ध के तुरन्त बाद इन दोषों को दूर करने के लिए तेरहवाँ, चौदहवाँ और पन्द्रहवाँ संशोधन स्वीकार किये गए। तेरहवें संशोधन ने नीग्रो लोगों की ही नहीं चीनियों, मैक्सीकनों, इण्डियनों और अन्य सब लोगों की दासता और अनैच्छिक अधिसेविता को समाप्त कर दिया। चौदहवें संशोधन ने भूतपूर्व दासों समेत, संयुक्त राज्य अमेरिका में उत्पन्न हुए या देशीकृत सभी लोगों को नागरिकता प्रदान कर दी, और यह भी व्यवस्था की कि कोई भी राज्य "अपने अधिकार क्षेत्र में किसी व्यक्ति को कानून के समान-संरक्षण से वंचित नहीं करेगा।" पन्द्रहवें संशोधन ने व्यवस्था की कि "संयुक्त राज्य या कोई राज्य किसी व्यक्ति के मताधिकार को जाति, रंग या पूर्व-अधिसेविता के आधार पर न नकारेगा न सीमित करेगा।"

1896 में न्यायमूर्ति हारलन ने इन व्यवस्थाओं का स्पष्ट उद्देश्य इस प्रकार प्रकट किया था :

> संविधान के अनुसार, कानून की दृष्टि में, इस देश में, नागरिकों का कोई श्रेष्ठ, हावी और प्रशासक दल नहीं है। यहाँ कोई जाति नहीं है। हमारा संविधान रंगान्ध है और नागरिकों में वर्गों को न स्वीकारता है न सहन करता है।......क़ानून मनुष्य को सिर्फ मनुष्य मानता है और जब इस देश के सर्वोच्च क़ानून द्वारा गारंटी किये गए नागरिक अधिकारों का प्रश्न आता है तो वह मनुष्य के परिवेश या रंग पर ध्यान नहीं देता है।

किन्तु यह मत सर्वोच्च न्यायालय के एक निर्णय (**प्लेस्सी वि० फर्गुसन**, 163 यू० एस० 537) में एक विसम्मति-लेख के रूप में दिया गया था, जिसमें राज्यों को सार्वजनिक सुविधाओं को जातीय आधार पर पृथक् कराने की माँग करने की अनुमति दे दी गई थी। और वह आरम्भिक

विसम्मति अब जाकर देश का क़ानून मानी जा रही है। **ब्राउन वि० बोर्ड आफ़ एजुकेशन**, 347 यू० एस० 483।

दासता के स्तर से, समस्त अमेरिकियों के अधिकारों में पूरी साझेदारी के स्तर तक उठने का नीग्रो का संघर्ष लम्बा और कठोर रहा है। इसने, शब्दशः सैकड़ों मुकदमे अदालतों के सामने पेश किये हैं। हज़ारों व्यक्तियों ने इस बात के लिए अपना समय और धन समर्पित किया है और अपनी लोकप्रियता ख़तरे में डाली है कि नीग्रो लोगों के, वोट देने; जूरी के रूप में काम करने; ऐसी जूरी से मुकदमा कराने जिसमें से नीग्रो निकाल न दिये गए हों; सार्वजनिक रेलों, बसों, या हवाई जहाज़ों और सार्वजनिक पार्कों और तैरने के तालाबों का उन्हीं शर्तों पर उपयोग करने जिन पर कि अन्य लोग करते हैं; और उन्हीं शर्तों पर शिक्षा पाने जिन पर कि श्वेत, पीत या ब्राउन रंग के जनता के और लोग पाते हैं; के अधिकारों की स्थापना हो सके। बहुत कुछ अभी करने को शेष है मगर अब हम चौदहवें और पन्द्रहवें संशोधनों के इस आदर्श के अधिक निकट हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका में क़ानून "मनुष्य को सिर्फ मनुष्य मानता है" और उसके रंग पर कोई ध्यान नहीं देता।

भेदभाव सिर्फ नीग्रो लोगों तक ही सीमित नहीं है; कुछ सबसे गर्हित भेद-भावों और कुछ सबसे अधिक कठिनाई पैदा करने वाले संवैधानिक प्रश्नों में पूर्वीय लोग अन्तर्ग्रस्त रहे हैं। इस प्रकार, एक आरंभिक मुकदमे में, सान फ्रांसिस्को के अधिकारियों की एक अन्यदेशीय चीनी को लॉण्ड्री चलाने का लाइसेंस न देने की कार्यवाही अवैध घोषित कर दी गई थी। **यिक वो वि० हापकिन्स**, 118 यू० एस० 356। हाल में, अन्य देशीय जापानियों के मछली पकड़ने के अधिकार को रद्द कर दिया गया था। **ताकाहाशी वि० फिश कमीशन**, 334 यू० एस० 410।

द्वितीय विश्वयुद्ध में अमेरिका ने लगभग एक लाख जापानियों को,

जिनमें से बहुत से नागरिक भी थे, पकड़ा था और उन्हें देश के भीतरी हिस्सों में कैम्पों में भेज दिया था। उनमें से बहुत-सों को अपनी उस सम्पत्ति और व्यापार को बेचना या कुर्बान करना पड़ा जिसे खड़ा करने में उन्होंने अपना जीवन लगाया था। ये मामले बस वैधानिक-शक्ति की हद तक पहुँच गए थे, कुछ का खयाल है कि उसे भी पार कर गए। यद्यपि यह कार्यक्रम बहुत ही कठोर था फिर भी अदालत ने इसे बहाल रखा, यद्यपि उसने यह स्पष्ट कर दिया कि उसने यह सिर्फ इसलिए किया है कि पर्ल हार्बर के बाद हम भयंकर आपात स्थिति में आ गए थे और सेना का यह भय सकारण था कि जापान पश्चिमी तट पर सेनाएँ उतार सकता है। यदि वैसा हुआ होता तो रॉकीज़ के पश्चिम में हमारे पास कोई उचित प्रतिरक्षा-साधन न होते। इन अत्यधिक असाधारण परिस्थितियों के अतिरिक्त वंश के आधार पर किये गए इस भेदभाव का कोई जिक्र भी न कर पाता। अदालत ने यहीं सीमारेखा भी खींच दी और निर्णय दिया कि एक बार पश्चिमी तट से हटा दिये जाने के बाद उन जापानियों को तब तक नज़रबंद नहीं बनाया जा सकता जब तक कि वे कोई आपत्तिजनक कार्य न करें, **एक्स पार्टी एण्डो**, 323 यू० एस० 283। अदालत ने कहा :

> कोई नागरिक जो निश्चित रूप से निष्ठावान् हो जासूसी या तोड़-फोड़ की कोई समस्या प्रस्तुत नहीं कर सकता। निष्ठा हृदय और मस्तिष्क की वस्तु है न कि जाति, विचारधारा और रंग की। जो निष्ठावान् हो वह निश्चय ही जासूस या तोड़-फोड़ करने वाला नहीं हो सकता। जब नज़रबन्द करने की शक्ति युद्ध-प्रयासों को जासूसी और तोड़-फोड़ से बचाने की शक्ति से प्राप्त हुई हो, तो कोई ऐसी नज़रबंदी जो उससे सम्बन्ध न रखती हो अनधिकृत है।

हम एक राष्ट्र के रूप में अपना सिर और ऊँचा उठाए रख सकेंगे यदि,

भविष्य में, सरकार का हरएक अंग, किसी भी बहाने से हो, किसी भी व्यक्ति के विरुद्ध उसकी जाति या उसके वंश के आधार पर होने वाला भेद-भाव बचा सकेगा।[1]

कोई भी समूह भेदभाव के खतरे से मुक्त नहीं है। आजकल काली चमड़ी वाले लोगों, नीग्रो, पूर्वीय, इटालियन, मेक्सिकन और इण्डियन लोगों के—प्रायः ऐसे पूर्वाग्रहों के शिकार हो जाने का खतरा रहता है जिससे अवैध भेदभाव उत्पन्न होते हैं। फिर भी, संसार के अधिकांश लोग पीली, लाल, भूरी या काली चमड़ी के हैं और सफेद चमड़ी के लोग कुछ बार कुछ स्थानों पर अपने-आपको अल्पमत में पा सकते हैं। स्वयं अमेरिका तक में कुछ ऐसे सफेद चमड़ी वाले लोगों के विरुद्ध हिंसात्मक पूर्वाग्रह फूट पड़े हैं जो यहूदी, कैथोलिक, मोरमो या जहोवा'ज विटनेस हैं, या जर्मन, इटालियन, आयरिश, स्लाविक या अन्य मूल-वंशीय हैं। यदि हम सरकार को जातीय, धार्मिक या राष्ट्रिक समूह के प्रति भेदभाव बरतने दें तो कोई अन्य समूह भी अपने को भेदभाव के छूत-रोग का शिकार पा सकता है। हम में से हरएक की एक मात्र सुरक्षा इसी में है कि हम क़ानून के आगे सब की बराबरी की, संविधान की आज्ञा को पूरी तरह लागू कराएँ।

---

1. हम यहाँ लोगों के विरुद्ध, जाति, विचारधारा या रंग के आधार पर किए जाने वाले सरकारी भेदभाव पर विचार कर रहे हैं। कुछ राज्यों ने प्राइवेट नियोजकों के लिए भी कानून बनाए हैं जिनसे कि नौकरी के प्रार्थियों के विरुद्ध उनका भेदभाव बरतना अवैध बन गया है। न्यूयार्क का कानून मैटर आफ हालैण्ड वि० एडवर्ड्स, 307 एन० वाई० 38; केसल बीच क्लब वि० आर्बरी, 2 एन० वाई० 2 डी 597; अमेरिकन ज्यूइश कांग्रेस वि० कार्टर, 190 एन० वाई० एस० 2 डी० 218।

डिस्ट्रिक्ट आफ कोलम्बिया वि० थाम्प्सन को०, 346 यू० एस० 100 में, जाति के आधार पर किसी रेस्तराँ द्वारा किसी व्यक्ति को अपनी सेवाएँ उपलब्ध करने से इनकार करने को अवैध घोषित करने वाला, डिस्ट्रिक्ट आफ कोलम्बिया का एक कानून बहाल रखा गया था।

नागरिक सत्ता

हमारी स्वतंत्रता का एक आधार यह है कि हमारी सरकार नागर (सिविलियन) है न कि ऐसी सरकार जिस पर धर्म या सेना हावी हो।

राज्य और धर्म का अलगाव

हमारा संविधान धर्म और राज्य-सत्ता के अलगाव की दृढ़ता से व्यवस्था करता है। यह "किसी धर्म की स्थापना या उसके स्वतंत्रतापूर्वक पालन की वर्जना" करने वाले क़ानून की मनाही करता है। यह किसी सार्वजनिक-पद के लिए किसी धार्मिक-परीक्षा को वर्जित करता है। इन सिद्धान्तों में चार बातें आती हैं। पहले, किसी भी पुरुष या स्त्री को अपने धर्म के कारण किसी सार्वजनिक पद के लिए, वह बड़ा हो कि छोटा, अयोग्य नहीं ठहराया जा सकता। दूसरे, सभी धर्म सरकार से समान-व्यवहार पाने से अधिकारी हैं। सरकार द्वारा किसी धर्म विशेष के पक्ष या विरोध में कोई भेदभाव नहीं बरता जा सकता, चाहे वह धर्म कितना ही लोकप्रिय या अलोकप्रिय हो। उदाहरण के लिए, किसी एक धर्म पर कर नहीं लगाया जा सकता जबकि किसी दूसरे धर्म को उससे छूट मिली हुई हो। तीसरे, "धर्म" शब्द में सारी ही निष्ठाएँ आ जाती हैं। केवल वे ही नहीं जिनके कि हम अभ्यस्त हैं बल्कि हिन्दू, बौद्ध और इस्लामी निष्ठाएँ भी इसमें सम्मिलित हैं। इसमें अनीश्वर-वाद, अज्ञेयवाद और दर्शन के अन्य सभी सम्प्रदाय आ जाते हैं। चौथे, धर्म और राज-सत्ता के बीच एक विभेदकारी दीवार खड़ी कर दी गई है। और, जैसाकि देखा गया है, यह गारंटी राज्यों और केन्द्र दोनों की ही कार्य-वाहियों के विरुद्ध उपलब्ध है। इसका मतलब यह नहीं कि इसके द्वारा धर्म और राज्य के बीच सारा ही सहयोग वर्जित कर दिया गया है। उदा-हरण के लिए, सरकार स्वैच्छिक आधार पर, धार्मिक कक्षाओं में जाने के लिए, बच्चों को स्कूल से छुट्टी दिलाने में सहयोग दे सकती है (**जोराक वि० क्लौसन** 343 यू० एस० 306); वह अन्य स्कूलों की तरह धार्मिक

स्कूलों के लिए भी, उसी आधार पर बस-यातायात की सुविधा दे सकती है; (**एवर्सन वि० बोर्ड आफ एजुकेशन**, 330 यू० एस० 1); यह चर्च की सम्पत्ति को कर से मुक्त कर सकती है। किन्तु सरकार किसी प्रकार के धर्म-पालन के लिए बाध्य नहीं कर सकती; वह सार्वजनिक कक्षाओं को धार्मिक शिक्षा के लिए काम में लाने की अनुमति नहीं दे सकती (**मैक कोलम वि० बोर्ड आफ एजुकेशन**, 333 यू० एस० 203); वह छात्रों को धार्मिक कक्षाओं में उपस्थित होने के लिए बाध्य नहीं कर सकती; वह धार्मिक कक्षाओं के शिक्षकों का वेतन नहीं दे सकती; वह धार्मिक स्कूलों के बजट का बीमा (अण्डरराइटिंग) नहीं कर सकती और न ही वह उन स्कूलों को धन या सम्पत्ति का अनुदान दे सकती है।

धर्म और राज-सत्ता के पार्थक्य का सिद्धान्त हमारे संविधान में धर्म से किसी प्रकार के द्वेष के कारण नहीं रखा गया है। यह इस दृढ़विश्वास के कारण हुआ है कि धार्मिक विश्वास, अन्य विचारों की ही तरह, एक ऐसी व्यवस्था के अधीन ही सर्वोत्तम रूप से फल-फूल सकते हैं जिसमें, किसी विश्वास विशेष का प्रोत्साहन या हतोत्साहन करके सरकार हस्तक्षेप न करे। संविधान के निर्माता उस कटु-संघर्ष से परिचित थे जो राज्य और धर्म के कार्यों का विलय कर देने से यूरोप और स्वयं कुछ अमेरिकी उपनिवेशों में उत्पन्न हो गया था। इसलिए उन्होंने निर्णय किया कि धर्म और राज्य के कार्यों को पृथक् करके, हमारी सरकारी व्यवस्था में इस प्रकार के संघर्ष को बचाया जाना चाहिए। अमेरिका में धर्म इससे और सुदृढ़ ही हुआ है कि उसे अपने पाँवों पर खड़ा होना पड़ा है, और सरकार ने न उसके साथ पक्षपात किया है न उसका विरोध किया है। साथ ही सरकार विभिन्न सम्प्रदायों के आन्तरिक मामलों और प्रतिद्वंद्विताओं में फंसने से बच गई है।

समय-समय पर बाल अपराध या धार्मिक निरक्षरता की समस्याओं से सम्बद्ध व्यक्ति इन समस्याओं का हल करने का प्रयत्न "सार्वजनिक स्कूलों में ईश्वर को फिर से प्रतिष्ठित" करके करते हैं। ऐसा वे स्कूल-भवनों में धार्मिक कक्षाओं की व्यवस्था करके करना चाहते हैं। लेकिन अधिकांश अमेरिकी चर्चें, धर्म और राज्य के पार्थक्य के सिद्धान्त के लाभों को पहचानती हैं। यद्यपि यह सिद्धान्त अब पूरी तरह स्थापित हो चुका है फिर भी ऐसा लगता है कि हर पीढ़ी को, सरकार पर धर्म के हावी हो जाने के किसी न किसी खतरे से संघर्ष करना ही पड़ता है।

सैनिक शासन

नागर कार्यों पर सैनिक अतिक्रमण का खतरा और अधिक गम्भीर है। उन्नीसवीं शताब्दी में—गृह-युद्ध के वर्षों को छोड़कर—हमारे समाज में सेना को अपेक्षया बहुत कम शक्ति प्राप्त रही है। किन्तु आजकल जबकि "शीत युद्ध" जारी है, सबको सैनिक प्रशिक्षण दिया जा रहा है और प्रतिरक्षा का व्यय हमारे राष्ट्रीय बजट के आधे से भी अधिक हो गया है, सैन्य प्रभाव बहुत बढ़ गया है।

अमेरिकी उपनिवेशी, सैनिक-प्रभुत्व के खतरे से पूरी तरह परिचित थे। स्वाधीनता के घोषणा-पत्र में राजा जार्ज तृतीय के विरुद्ध की गई शिकायतों में कुछ ये थीं कि विधान-सभा की सहमति के बगैर उसने एक स्थायी सेना रख छोड़ी थी ; सेना को उपनिवेशियों के यहाँ ठहरा रखा था (अर्थात् उपनिवेशियों को ब्रिटिश सैनिकों के लिए निवास और भोजन की व्यवस्था करनी पड़ती थी), और अपराधों के लिए नागर सत्ता द्वारा चलाए जाने वाले मुकदमों से सैनिकों की रक्षा की जाती थी। ये शिकायतें संविधान के दूसरे, तीसरे और पाँचवें संशोधन में प्रतिबिम्बित हुई हैं।

सेना पर नागर नियंत्रण की रक्षा करने वाला बहुत बड़ा साधन रहा है बन्दी प्रत्यक्षीकरण प्रादेश (रिट आफ हैबियस कार्पस)। यह प्रादेश एक

ऐसा साधन है जिसके द्वारा कोई व्यक्ति कारागार या जेल में अपने बन्द किये जाने की वैधानिकता की जाँच किसी नागर न्यायालय में करा सकता है। अनेक परिस्थितियों में, खासतौर से सेना द्वारा बन्दी बनाये जाने की स्थिति में यह प्रादेश बहुत उपयोगी है। यही एक तरीका है जिससे नागर न्यायालय सैनिक प्राधिकारियों के बन्दी बनाने और मुकदमा चलाने के अधिकार-क्षेत्र में हस्तक्षेप कर सकते हैं। संविधान के अनुच्छेद 1, धारा 9, खण्ड 2 में कहा गया है कि "बन्दी प्रत्यक्षीकरण प्रादेश का अधिकार विद्रोह या आक्रमण की अवस्थाओं को छोड़कर जबकि सार्वजनिक सुरक्षा के लिए यह आवश्यक हो, कभी भी स्थगित नहीं किया जाएगा।" इस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका में किसी व्यक्ति को गिरफ्तार करने और बन्दी बनाने के किसी सेनाधिकारी के अधिकार की जाँच नागर न्यायालय द्वारा की जा सकती है। जब बन्दी प्रत्यक्षीकरण प्रादेश स्थगित किया जाय—जैसा कि गृह-युद्ध में कुछ समय के लिए किया गया था—तो न्याया-लयों को यह निश्चय करना चाहिए कि "सार्वजनिक सुरक्षा" के लिए यह आवश्यक है।

गृह-युद्ध के समय इन सिद्धान्तों की परीक्षा हुई थी। राष्ट्रपति लिंकन ने आदेश दिया था कि जिन व्यक्तियों ने स्वैच्छिक भर्ती को हतोत्साहित किया है, मसौदे का विरोध किया है, ग़ैर-वफ़ादारी के कार्यों के अपराधी हैं, या जिन्होंने विद्रोहियों को मदद या सुविधा दी है उन पर सैनिक न्यायालयों में मुकदमा चलना चाहिए और दण्ड दिया जाना चाहिए। यह ज़रूर है कि इन सभी अपराधों की परिभाषा कांग्रेस दण्डनीय-अपराध के रूप में कर चुकी थी और नागर न्यायालय इस विषय में दण्ड दे सकते थे। इण्डियाना के एक नागरिक, मिलिगन, पर इसी प्रकार मुकदमा चला और उसे प्राणदण्ड दिया गया। इण्डियाना उस समय वास्तव में युद्ध भूमि बना हुआ था जहाँ कि समय-समय पर परिसंघवादियों के आक्रमण होते रहते थे। इण्डियाना के

अनेक भाग संघ-सिद्धान्त के विरोधी थे। किन्तु नागर न्यायालय बन्द नहीं हुए थे, वे खुले थे। सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि इन परिस्थितियों में यह आदेश संविधान-विरुद्ध है। **एक्स पार्टी मिलिगन**, 4 वाल० 2। सर्वोच्च न्यायालय ने कहा कि मार्शल लॉ बहुत ही आवश्यकता पड़ने पर लागू किया जाना चाहिए जब कि नागर न्यायालय बन्द कर दिए गए हों, और इस प्रकार आपराधिक न्याय, सैनिक न्यायालयों के अतिरिक्त और किसी प्रकार करना सम्भव ही न रहा हो। इसके अतिरिक्त यह काम और कर्त्तव्य नागर-न्यायालयों का है कि यह तय करें कि क्या सार्वजनिक सुरक्षा के लिए यह आवश्यक है कि नागर-सत्ता का स्थान सैनिक-सत्ता ले।

इन सिद्धान्तों के बावजूद दूसरे विश्व-युद्ध में हमें हवाई में सैनिक नियंत्रण का एक आत्यंतिक उदाहरण देखने को मिला। गवर्नर द्वारा पूरा हवाई मार्शल लॉ के अधीन कर दिया गया था; नागर न्यायालय बन्द कर दिए गए थे और कमांडिंग जनरल ही कानून बनाता था और उन्हें लागू करने के लिए स्वयं अपनी ही प्रक्रियाएँ स्थापित करता था। उसके सैनिक न्यायालयों ने जूरी द्वारा मुकदमे की सुनवाई की सुरक्षा का उपयोग किए बगैर ही, ग्राहकों की निधियों का गबन करने के मामले में दलालों को सज़ा दे दी और दावा किया कि ट्रैफिक विनियमों के भंग के लिए उन्हें 5000 डालर तक जुर्माना करने और पाँच साल तक की सज़ा देने का अधिकार है। यह शासन 7 दिसम्बर, 1941 को स्थापित किया गया था, मगर इसकी वैधता का निश्चय करने के लिए यह कार्यवाही 1944 तक नागर न्यायालयों में नहीं लाई गई। अन्ततः न्यायालय ने निर्णय किया कि वह सैनिक-शासन अवैध था क्योंकि काँग्रेस ने उसकी स्वीकृति नहीं दी थी। **डंकन वि० कहानामोकू**, 327 यू० एस० 304। **मिलिगन** के मामले के आधार पर इस प्रकार का सैनिक-शासन स्थापित करने का अधिकार सुगमता से स्वीकार नहीं किया जा सकता था।

मार्शल लॉ का लागू किया जाना आवश्यक रूप से बड़े युद्धों तक ही सीमित नहीं है। हिंसा का खतरा होने पर अनेक बार संघीय या राज्य सरकारों द्वारा, व्यवस्था बनाए रखने के लिए, सेना बुलाई गई है। कुछ बार उसे हड़तालें तुड़वाने, तेल-कूपों का उत्पादन सीमित करने और चुनावों में मतदाताओं को रोकने के लिए भी बुलाया गया है। **डगलस, दि राइट आफ दि पीपुल, 197-206**। अभी हाल ही में स्कूलों में रंग-भेद दूर करने के संघर्ष में, लिटिल रॉक में संघीय सरकार का फैसला लागू होने से रोकने के लिए, आरकन्सास के गवर्नर ने सेना का उपयोग किया था। इसके जवाब में अमेरिका के राष्ट्रपति ने भी लिटिल रॉक में इस उद्देश्य से सेनाएँ भेजीं कि स्कूलों में समेकन के न्यायालय के आदेश में हस्तक्षेप न किया जा सके। टेनेसी के गवर्नर ने भी, टेनेसी में क्लिण्टन में ऐसा ही किया था।

सेना बुलाए जाने का अर्थ यह नहीं है कि सेना पुलिस के काम संभाल सकती है या नागर न्यायालय बन्द कर दिये जा सकते हैं या समाचार-पत्रों को सेंसर किया जा सकता है। नागर-न्यायालय ही इस बात के अन्तिम निर्णायक हैं कि नागर-सत्ता के स्थान पर सैनिक सत्ता स्थापित करना कहाँ तक उचित था।

एक और दूसरा क्षेत्र जहाँ सेना द्वारा नागर-सत्ता के अतिक्रमण की सम्भावना है, कोर्ट-मार्शल (सैनिक न्यायालयों) में होने वाले मुकदमे हैं। सशस्त्र सेनाओं के शासन के लिए नियम बनाने के कांग्रेस के संवैधानिक अधिकारों में सैनिक न्यायालय स्थापित करने का अधिकार शामिल है जो कि सैनिक कानून के विरुद्ध सशस्त्र सेना के सदस्यों के अपराधों के मुकदमे सुन सकें। हाल के वर्षों में कांग्रेस ने परीक्षणों की एक न्यायपूर्ण व्यवस्था स्थापित करने की दिशा में बहुत काम किया है जिसमें अभियुक्त को काफी संरक्षण मिल जाता है। फिर भी एक सैनिक परीक्षण, विधान के अन्तर्गत किया गया न्यायिक परीक्षण नहीं है। उदाहरण के लिए परीक्षण करने

वाले न्यायाधीश साधारणतया न्यायिक प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होते; उनका कार्य-काल संघीय न्यायाधीशों की तरह यावज्जीवन नहीं होता जोकि उन्हें स्वतंत्र बना सके; अभियुक्त को ग्रैण्ड जूरी द्वारा अभ्यारोपित हाने या नियमित जूरी द्वारा परीक्षित होने का अधिकार नहीं होता।

बन्दी प्रत्यक्षीकरण आदेश (रिट आफ हैबियस कार्पस) द्वारा कोई नागर न्यायालय इस प्रकार के सैनिक परीक्षण का यह देखने के लिए पुनर्विलोकन कर सकता है कि वह परीक्षण कांग्रेस के सम्बद्ध अधिनियमों और संविधान के अनुसार किया गया है कि नहीं।

गृह-युद्ध के समय कांग्रेस ने सारे सरकारी ठेकेदारों को सैनिक परीक्षण के मातहत कर दिया था किन्तु कुछ वर्ष बाद यह प्रक्रिया असंवैधानिक घोषित कर दी गई। **एक्स पार्टी हेण्डरसन,** 11 फेड० कैस० 1067। अभी हाल में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय किया है कि समुद्र-पार स्थित सैनिकों की पत्नियों और उनके परिवार वालों पर कोर्ट मार्शल में मुकदमा नहीं चलेगा बल्कि वे नागर न्यायालयों में परीक्षण के अधिकारी होंगे। **किनसेल्ला वि० सिंगलटन,** 361 यू० एस० 234। सेना से एक बार विमुक्त कर दिये जाने के बाद किसी सैनिक पर, सेना में रहने के समय किये गए किसी अपराध के लिए कोर्ट मार्शल द्वारा मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। **टाथ वि० क्वर्लीस,** 350 यू० एस० 11। सैनिक अदालतों के अधिकार अब केवल उन व्यक्तियों तक सीमित कर दिये गए हैं जो अपने परीक्षण के समय सशस्त्र सेना में हों। सशस्त्र सेनाओं से सम्बद्ध और उनके साथ या उनके लिए देश या विदेश में काम करने वाले नागर व्यक्ति अपने अपराधों के लिए सैनिक नहीं, नागर न्यायालयों द्वारा परीक्षित होंगे।

अभियुक्त व्यक्तियों के अधिकार

अधिकांश मुकदमेबाज़ी अपराध के अभियुक्तों के अधिकारों के विषय में होती है। यदि इनके प्रमुख अधिकारों की एक सूची बनाई जाए तो यह

स्पष्ट हो जाएगा कि हमारी आपराधिक परीक्षण की प्रणाली आधुनिक एक-तन्त्रों और अनेक देशों में तीन सौ वर्ष पूर्व प्रचलित व्यवस्थाओं से कितनी मौलिक रूप से भिन्न है। इन अधिकारों में ये सम्मिलित हैं :

(क) **त्वरित और सार्वजनिक परीक्षण का अधिकार :** हमारी व्यवस्था में गुप्त परीक्षणों या अभियुक्त के लिए अहितकर विलम्बों को सहन नहीं किया जाता।

(ख) **जूरी द्वारा परीक्षण का अधिकार :** हमारा संविधान ऐसे मामलों के बारे में जिनमें कि प्राण, स्वतंत्रता या सम्पत्ति अन्तर्ग्रस्त हों, किसी अधिकारी पर पूरी तरह विश्वास नहीं करता। इस प्रकार के निर्णय वह ग़ैर-सरकारी नागरिकों की जूरी के सर्वसम्मत अधिमत पर आधृत करता है। यह अधिकार स्वेच्छा से छोड़ा जा सकता है मगर किसी आपराधिक मामले वाला, या दो सौ डालर से अधिक की आर्थिक वसूली के दावे के नागर मामलेवाला पक्ष अधिकार के तौर पर जूरी द्वारा परीक्षण की माँग कर सकता है।

कुछ लोगों द्वारा जूरी-परीक्षण से बचने का बड़ा लम्बा संघर्ष किया गया है। इनमें से एक तरीका है तथाकथित साम्यपूर्ण उपचारों (एक्वीटेबल रेमेडीज़) का उपयोग जिनके द्वारा न्यायाधीश को अकेले कार्य करने की अनुमति मिल जाती है। इसका एक ताज़ा उदाहरण अनेक राज्य-विधियों में मिलता है जिनमें, बिना जूरी के ही न्यायाधीश को, अश्लील साहित्य की बिक्री रोक देने का अधिकार प्राप्त है। दूसरा उदाहरण, बिना जूरी के बैठने वाले न्यायाधीश द्वारा न्यायालय-अवमान के लिए किसी व्यक्ति पर जुर्माना करने या उसे सज़ा दे देने के अधिकार का प्रयोग है। सवैध-आचरण-इक्वीटी के मामले के व्यादेश के लिए नागर मुक़दमे में जूरी द्वारा परीक्षण कराने का अधिकार नहीं होता। यदि कोई न्यायाधीश जूरी के बिना अकेले ही पुस्तक-विक्रेताओं के विरुद्ध पुलिस भेज सकता है या अवमान के लिए किसी व्यक्ति पर जुर्माना कर सकता है या सज़ा दे सकता

है तो इसका अर्थ है कि नागर अधिकारों में कमी आती है। अतः नागर और आपराधिक दोनों ही मामलों में जूरी की क्रियाशीलता की रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि कोई न्यायाधीश अकेले ही आचरण के जिन मामलों में व्यादेश दे सकता हो या अवमान-अधिकारों के अधीन जिन मामलों में सज़ा दे सकता हो, उनके प्रकार काफ़ी सीमित कर दिये जाएँ। जूरी, जजों के तानाशाही कार्यों के विरुद्ध एक ढाल है। जूरी "समाज की भावना" है; और इतिहास बताता है कि समाज अक्सर वहाँ दया या सहानुभूति दिखाता है जहाँ न्यायाधीश बहुत कठोर होते हैं। वास्तव में जूरी न्यायांग के अत्याचार के विरुद्ध जनता की गारंटी है।

(ग) **स्व-अभिशंसन (सेल्फ इन्क्रीमिनेशन) के विरुद्ध संरक्षण** : पाँचवे संशोधन में व्यवस्था है कि किसी व्यक्ति को "आपराधिक मामले में स्वयं अपने विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जाएगा।" किसी बात को प्रमाणित करने से इनकार करने के अभियुक्त के अधिकार को हमारे पूर्वजों ने इतना महत्त्वपूर्ण समझा था कि उन्होंने इसे संवैधानिक गारंटी का गौरव प्रदान कर दिया। प्रमाणित करने से इनकार करने का अधिकार संघीय आपराधिक मामलों में ही नहीं, उन सभी संघीय मामलों में भी प्राप्त है जिनमें किसी व्यक्ति को अपने ही विरुद्ध अभियोग में, "साक्ष्य की शृंखला की कोई कड़ी" बताने के लिए कहा जाए। **काउंसलमैन वि० हिचकाक,** 142 यू० एस० 547; **ब्लाऊ वि० युनाइटेड स्टेट्स,** 340 यू० एस० 159, 161। इसके अलावा, इस मौलिक अधिकार के प्रयोग के लिए न राज्य सरकार सज़ा दे सकती है, न संघीय सरकार ही। "स्व-अभिशंसन (अपने-आपको अपराध में फँसाने वाली अपनी गवाही) के विरुद्ध मिला हुआ अधिकार एक खोखला मज़ाक बनकर रह जाएगा यदि इसके प्रयोग को अपराध की स्वीकारोक्ति या झूठी गवाही का निर्णायक सबूत मान लिया जाए।" **स्लोकोवर वि० बोर्ड आफ एजुकेशन,** 350 यू० एस० 551,

557। अपराध के विषय में बिलकुल निर्दोष होने पर भी किसी व्यक्ति को मुकदमे से स्वाभाविक भय हो सकता है। पाँचवाँ संशोधन ऐसे ही निर्दोष व्यक्ति की रक्षा करता है जो संदिग्ध परिस्थितियों में फँस गया हो। बहुत से राज्यों ने अपने संविधानों में इस अधिकार को अपने विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य किए जाने के विरुद्ध तक बढ़ा दिया है।

मध्यकालीन यूरोप में, यातना देना अपराध की जाँच का सर्वमान्य अंग था। कुछ पुलिस अधिकारी इसे अब भी उपयोगी मानते हैं। किन्तु अदालतों ने अपराधियों की स्वीकृति या यातना या बल-प्रयोग से प्राप्त की गई स्वीकारोक्तियों को मानने से इनकार करके, इन तीसरे दर्जे के तरीकों से अभियुक्तों की रक्षा करने का प्रयत्न किया है। **चेम्बर्स वि० फ्लोरिडा,** 309 यू० एस० 227। यातना या ज़ोर-ज़बरदस्ती शारीरिक पिटाई के रूप में हो सकती है। वह मनोवैज्ञानिक बाध्यताओं और धोखे-धड़ी का परिणाम भी हो सकती है। **लेयरा वि० डेन्नो,** 347 यू० एस० 556। संघीय न्यायालयों में, पाँचवें संशोधन का, अपने को फँसाने वाली गवाही देने के लिए बाध्यता का, निषेध, बल प्रयोग द्वारा प्राप्त की गई स्वीकारोक्ति के आधार पर प्रतिवादी को दण्डित होने से बचाता है। और, यद्यपि राज्य पाँचवें संशोधन के पूरे संरक्षण[1] देने के लिए बाध्य नहीं हैं, फिर भी उन्हें

1. जैसा कि हम देख चुके हैं, न्यायालय ने माना है कि चौदहवें संशोधन की उचित प्रक्रिया धारा के कारण प्रथम आठ संशोधनों की कुछ व्यवस्थाएँ राज्यों पर भी लागू होती हैं। जैसे, प्रथम संशोधन में वर्णित अधिकार। (देखिए गिटलो वि० न्यूयार्क, 268 यू० एस० 652, 666; मरडोक वि० पेन्सिलवेनिया, 319 यू० एस० 105; बोर्ड आफ एजुकेशन वि० बार्नेट, 319 यू० एस० 625)। फिर भी कुछ जजों की विमति के विरुद्ध न्यायालय ने यह निर्णय दिया है कि पाँचवें संशोधन द्वारा संरक्षित स्व-अभिशंसन (देखिए, एडमसन वि० कैलीफोर्निया, 332 यू० एस० 46) और छठे संशोधन द्वारा संरक्षित वकील करने का अधिकार (देखिए, बेट्स वि० ब्रैडी 316 यू० एस० 455) पूरी तरह राज्यों पर लागू नहीं हैं। देखिए डगलस, वी दि जजेज (1956), पृष्ठ 262 एफ-एफ।

उचित प्रक्रिया धारा में व्यक्त न्यायपरायणता की न्यूनतम आवश्यकता पूरी करने के लिए बलात् प्राप्त की गई स्वीकारोक्तियाँ रद्द करनी पड़ती हैं। **ब्राउन वि० मिसिसिपी**, 297 यू० एस० 278।

कांग्रेस ने, तीसरे दर्जे के तरीके काम में लाने के अवसर कम करने का यत्न किया है और इसके लिए उसने आवश्यक कर दिया है कि, संघीय क्षेत्र में, गिरफ्तार किये गए व्यक्ति को यथाशीघ्र मजिस्ट्रेट के सामने लाया जाय ताकि यह सिद्ध हो सके कि गिरफ्तारी उचित है कि नहीं और उसके परिवार वाले और मित्र यह जान सकें कि वह कहाँ और क्यों गिरफ्तार है। **मैलोरी वि० यूनाइटेड स्टेट्स**, 354 यू० एस० 449। अनेक राज्यों में यह सुरक्षा उपलब्ध है।

(घ) **अनधिकृत गिरफ्तारियों, तलाशियों और जब्तियों के विरुद्ध सुरक्षा** : किसी अपराध की गुत्थी सुलझाने के लिए, कुछ बार पुलिस अधिकारी, तलाशी का वारंट प्राप्त किए बगैर ही, सबूत प्राप्त करने के लिए संदिग्ध व्यक्तियों के घरों की तलाशी ले बैठते हैं।

हमारे संविधान के अधीन मकान या दफ्तर की तलाशी तब तक नहीं ली जा सकती है जब तक कि अदालत तलाशी का वारंट जारी करके तलाशी लेने का अधिकार न दे दे। यह तभी जारी किया जाता है जब पुलिस आवेदन करे और उसमें यह दिखाए कि उनके पास यह विश्वास करने का संभावित कारण मौजूद है कि उन्हें अपराध का कोई सबूत प्राप्त हो जाएगा। जब यह जारी भी किया जाता है तब भी वारंट द्वारा तलाशी का क्षेत्र सीमित कर दिया जाता है कि कौन-कौन से स्थानों की तलाशी ली जानी है और कौन-कौन वस्तुएँ ज़ब्त की जानी हैं। इसी प्रकार गिरफ्तारी भी केवल वारंट के आधार पर ही हो सकती है—जब तक कि अधिकारी अपराध होते स्वयं न देख ले या उसके पास यह मानने का संभावित कारण (तर्कपूर्ण आधार) न हो कि किसी व्यक्ति ने अपराध किया है। केवल

संदेह के आधार पर की गई गिरफ्तारियाँ संवैधानिक नहीं हैं। **हेनरी वि० यूनाइटेड स्टेट्स,** 361 यू० एस० 98। और यदि वारंट या सम्भावित कारण के बिना गिरफ्तार किये गए व्यक्ति की तलाशी ली जाए और उसे अपराध में फँसाने वाली चीज़ें बरामद हों तो—संघीय न्यायालयों में, परीक्षण में, सबूत के तौर पर उनका उपयोग नहीं किया जा सकता। **वीक्स वि० यूनाइटेड स्टेट्स,** 332 यू० एस० 383। कुछ राज्य न्यायालय भी इसी नियम का अनुसरण करते हैं। देखिए **पीपुल वि० काहन,** 44 कैल० (2 डी) 434।

एलेक्ट्रानिक और दूसरे प्रकार के श्रवण-साधनों से आजकल पुलिस या जासूसों के लिए, टेलीफोन के तार "टैप" करके या घरों को "बग" करके वार्तालापों को सुन लेना सरल हो गया है। **इरविन वि० कैलीफोर्निया,** 347 यू० एस० 128। कांग्रेस ने तारों को टैप करके सबूत जुटाना ग़ैर-कानूनी बना दिया है और यह संघीय न्यायालयों के परीक्षणों में काम में नहीं लाया जा सकता। लेकिन बहुत से राज्य न्यायालय इस प्रकार के सबूत स्वीकार कर लेते हैं। यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय में हमेशा इस बात पर मतभेद रहता है फिर भी अभी तक वह यह निर्णय नहीं दे सका है कि टेलीफोन के तार टैप करना ऐसी तलाशी है जिसके लिए मजिस्ट्रेट का वारंट आवश्यक है। **आन ली वि० यूनाइटेड स्टेट्स,** 346 यू० एस० 747।

व्यक्ति और उसके घर के एकान्त की सुरक्षा की नीति ने निश्चय ही कुछ प्रकार के अभियोग चलाना कठिन कर दिया है और अपराधियों का जीवन सरल-सा मालूम होता है। किन्तु लम्बे अनुभव से हम अमेरिकन लोग जानते हैं कि यह नीति समझदारी की है। दूसरे लोगों की तरह पुलिस को भी कानून के भीतर रहना चाहिए। अगर पुलिस को सिर्फ संदेह के आधार पर गिरफ्तार करने और तलाशी लेने से रोका जायगा तो वह अपराध करने वालों को खोजने में और अधिक कुशलता दिखाएगी।

(ङ) **वकील करने का अधिकार :** हर मामले में अभियुक्त वकील नियुक्त कर सकता है बशर्ते कि वह उसकी फीस दे सके। अगर वह वकील की फीस देने के योग्य न हो तो भी संघीय न्यायालयों के सब मामलों में, उसे वकील नियुक्त कराने के अधिकार प्राप्त हैं। अगर अभियुक्त व्यय न दे सकता हो तो कुछ राज्य भी वकीलों की व्यवस्था करते हैं। जिस अभियुक्त पर जीवन-दण्ड वाले अपराध के लिए मुकदमा चल रहा हो उसके लिए वकील की व्यवस्था अनिवार्य है। **पावेल वि० अलाबामा,** 287 यू० एस० 45। फिर भी कुछ राज्यों में निर्धन प्रतिवादियों पर गंभीर अपराधों के लिए मुकदमे चलते हैं और न उन्हें स्वयं कानून आता होता है और न उनकी ओर से प्रतिवाद के लिए कोई वकील होता है। **बेट्स वि० ब्रैडी,** 316 यू० एस० 455।

(च) **अपने ऊपर लगाए गए अभियोग को जानने, अपने प्रतिवाद में सबूत पेश करने और जिन गवाहों को वह बुलाना चाहे उन्हें आने के लिए बाध्य करने के लिए न्यायालय के आदेश निकलवाने का अभियुक्त का अधिकार :** ये सब संघीय और राज्य न्यायालयों में क़ानून की उचित प्रक्रिया के मूलभूत सिद्धांत हैं।

(छ) **निष्पक्ष परीक्षण का अधिकार :** उचित प्रक्रिया के अधीन, जीवन दण्ड के लिए किसी व्यक्ति का परीक्षण निष्पक्ष नहीं माना जायगा यदि वह परीक्षण सार्वजनिक हिंसा के वातावरण में किया जाय (**मूर वि० डेम्प्से,** 261 यू० एस० 86) या उसमें अभियुक्त को अपने बचाव की तैयारी के लिए पर्याप्त समय न दिया गया हो। इसी सिद्धान्त के अनुसार, पुलिस न्यायालय के ऐसे जजों द्वारा दी गई सज़ा भी अवैध मानी जाती है जिनका वेतन उनके किए गये जुर्मानों के अनुसार तय होता हो। ऐसा कोई परीक्षण निष्पक्ष नहीं माना जा सकता जिसमें जज को वेतन तभी मिले जब कि वह नागरिकों को अपराधी घोषित करे। **टूमे वि० ओहियो,** 273

यू० एस० 510।

(ज) **अस्पष्ट और घटनोत्तर क़ानूनों के विरुद्ध संरक्षण :** क़ानून के भंग के बारे में उस क़ानून की गैर-जानकारी, प्रायः बहाने के तौर पर स्वीकार नहीं की जाती। किन्तु इसमें यह माना जाता है कि उस क़ानून को सहज बोधगम्य रूप में प्रस्तुत किया जा चुका है और जो उसे खोजना चाहें उन्हें वह सुलभ है। एक रोमन सम्राट ने कानूनों को इतनी ऊँचाई पर चिपकवाया कि कोई उन्हें पढ़ ही नहीं सकता था। अतः लोगों को यह पता ही नहीं था कि क्या काम क़ानूनी है और क्या गैर-क़ानूनी। हमारे उचित प्रक्रिया के सिद्धान्त में यह विचार निहित है कि किसी व्यक्ति पर अपराध का अभियोग लगने से पहले कोई ऐसा कानून लागू होना चाहिए जो इस बात की उचित सूचना दे सके कि किसी सीमा-रेखा को व्यक्ति को पार नहीं करना चाहिए। रूस में 1958 तक ऐसी संहिता की व्यवस्था थी जो किसी भी कार्य को, संहिता में वर्णित विशिष्ट अपराधों के 'समतुल्य' घोषित कर देती थी। उससे अभियोजकों और न्यायालयों को अपनी सुविधा के अनुसार नये अपराध तैयार करने की बहुत स्वतंत्रता रहती थी। इस प्रकार यदि पुलिसमैन पर आक्रमण अपराध था तो जज, किसी अन्य सरकारी कर्मचारी पर आक्रमण को भी अपराध बना सकता था यद्यपि संहिता में सिर्फ पुलिस का ही स्पष्ट उल्लेख था। हमारे यहाँ यह तरीका हमेशा गैर-क़ानूनी माना गया है।

घटनोत्तर—एक्स पोस्ट फैक्टो—(घटना हो चुकने के बाद उसे अपराध घोषित करने वाले) क़ानून लागू किये जाने का एक विषद उदाहरण हमें हंगरी का मिलता है। 1956 के विद्रोह में भाग लेने वाले (अठारह वर्ष से कम आयु के) तरुण, हंगरी के क़ानून के अनुसार अवध्य थे। प्राण दण्ड केवल अठारह वर्ष या उससे अधिक आयु के लोगों को दिया जा सकता था। विद्रोही तरुणों को अठारह वर्ष का होने तक कैद में रखा गया और

उसके बाद उनका वध कर दिया गया। इस प्रकार अपराध हो चुकने के बाद उसका दण्ड बढ़ा दिया गया। हमारे देश में ऐसा या कोई भी घटनोत्तर क़ानून अवैध है।

(झ) **कालुष्य आनियमों (बिल्स आफ अटेण्डर) के विरुद्ध संरक्षण :** एक समय था जब लोगों को न्यायिक परीक्षण बिना ही सिर्फ विधानमण्डल के अधिनियम के अधीन अपराधी घोषित कर दिया जाता था और दण्डित कर दिया जाता था। यह तरीका पन्द्रहवीं और सोलहवीं शताब्दी में इंग्लैण्ड में बहुत काम में लाया जाता था। विधानमण्डल द्वारा व्यक्ति के परीक्षण और दण्डित किए जाने का प्राय: अर्थ होता था उसकी सम्पत्ति की ज़ब्ती और उसका देश निकाला। और प्राय: उसके कर्ज़दारों को, सरकारी तौर से, उसका कर्ज़ा लौटाने से बरी कर दिया जाता था। कुछ बार "रक्त को भ्रष्ट करके" दण्ड उसके उत्तराधिकारियों तक बढ़ा दिया जाता था और उन्हें दण्डित व्यक्ति की सम्पत्ति उत्तराधिकार में पाने से वंचित कर दिया जाता था। इंग्लैण्ड में कालुष्य आनियम प्राय: सत्ता-विहीन धार्मिक समूहों और राजनैतिक विरोधियों के विरुद्ध काम में लाए जाते थे। इंग्लैण्ड से हमारे देश के स्वतंत्र होने के समय से, 1787 में संविधान स्वीकृत होने से पहले तक, विभिन्न राज्यों ने कालुष्य आनियम पारित किए थे जो प्राय: उन व्यक्तियों के विरुद्ध उद्दिष्ट थे जिन्होंने हमारे स्वातंत्र्य संग्राम में इंग्लैण्ड का साथ दिया था।

कालुष्य आनियमों को अवैध घोषित करके हमने दण्ड के इस तरीके को रद्द कर दिया। यदि कोई राज्य या संघीय सरकार किसी व्यक्ति को दण्डित करना चाहती है तो उसे उस व्यक्ति के विरुद्ध न्यायिक परीक्षण का मार्ग अपनाना होगा। इसी आधार पर 1946 में न्यायालय ने यह निर्णय किया था कि कांग्रेस के लिए कुछ संघीय कर्मचारियों को निष्ठाहीन मानना या घोषित करना और यह तय करना कि उनके वेतन चुकाने के लिए

तत्काल या भविष्य में किन्हीं संघीय निधियों का उपयोग न किया जाए, कालुष्य आनियम है। **यूनाइटेड स्टेट्स वि० लोवेट,** 328 यू० एस० 303।

किसी व्यक्ति को आजीविका से वंचित करना, उसे निष्ठाहीन कह देना और उसे पूरी तरह जाति-बहिष्कृत-सा कर देना दण्ड माना गया।

कुल मिलाकर, दण्ड-प्रक्रिया के ये नियम हमारी स्वतंत्रता की अनिवार्य सुरक्षाएँ हैं। जब तक कि क़ानून को लागू करने की प्रक्रियाएँ, व्यक्ति की, दमनकारी परीक्षण-व्यवहारों से रक्षा नहीं करतीं तब तक क़ानून के मौलिक (सबस्टेण्टिव) नियम (जो कि हमारे सम्पत्ति-विषयक एवं नागर अधिकारों का वर्णन करते हैं और यह बताते हैं कि अपराध क्या है) किसी मतलब के नहीं हैं। यदि किसी व्यक्ति का परीक्षण गुप्त रूप से हो सके, ऐसे अपराधों के लिए हो सके जिनकी परिभाषा क़ानून में नहीं मिलती, उसे अपने विरुद्ध लगाए गए आरोपों को जानने और उनका उत्तर देने का अवसर न मिले, मानसिक या शारीरिक यातना से वह सुरक्षित न हो, अपने प्रतिवाद के लिए उसे वकील न मिले तो फिर उसके मौलिक अधिकारों को संरक्षित या सुरक्षित नहीं कहा जा सकता। हमारे संविधान ने जिन प्रक्रियात्मक अधिकारों की गारंटी दी है, वे ही वास्तव में स्वतंत्र समाज और पुलिस राज्य के अन्तर को स्पष्ट करते हैं।

हमारी व्यवस्था का आदर्श यह है कि किसी भी व्यक्ति को तब तक सज़ा न मिले जब तक कि एक निष्पक्ष परीक्षण द्वारा वह अपराधी नहीं पाया गया है। हमारा उद्देश्य सब बातें अपराधी के लिए सरल और पुलिस के लिए कठिन बनाने का नहीं है। हमारा उद्देश्य सिर्फ यह है कि निरपराध व्यक्ति की रक्षा हो। लम्बे अनुभव से हमने पाया है कि निरपराध व्यक्तियों की रक्षा का सर्वोत्तम तरीका यह है कि हरएक के लिए एक-से क़ानूनी नियमों पर बल दिया जाए—चाहे वह सामान्य नागरिक हो, पुलिसमैन हो या जज हो। साधन भी उतने ही महत्त्वपूर्ण हैं जितने कि साध्य।

सम्पत्ति विषयक अधिकार

स्वतंत्रता की किसी भी योजना में सम्पत्ति का बहुत महत्त्व रहता है। सम्पत्ति किसी मनुष्य के व्यक्तित्व का विस्तार होती है, जैसा कि वह उस व्यक्ति द्वारा बनाए गए घर से या उसके द्वारा इकट्ठी की गई पुस्तकों, संगीत और कलाकृतियों से व्यक्त होता है। किसी व्यक्ति का घर उसका दुर्ग है जो कि पूरी दुनिया के विरुद्ध उसके एकांत की सुरक्षा का आश्वासन है। जैसा कि बड़े पिट ने एक बार कहा था :

> निर्धनतम व्यक्ति भी अपनी झोंपड़ी में बैठकर राजा की पूरी शक्ति की अवहेलना कर सकता है। वह कमज़ोर हो सकती है—उसकी छत हिलती हुई हो सकती है—उसमें से तूफान के झोंके घुस आ सकते हैं—बारिश घुस सकती है—मगर इंग्लैण्ड का बादशाह वहाँ प्रवेश नहीं कर सकता—उसकी पूरी शक्ति भी किसी ढहे हुए खण्डहर की भी देहरी लाँघने का साहस नहीं कर सकती।

यही कारण है कि पुलिस जब चाहे किसी के घर में नहीं घुस सकती या उसकी जगह की तलाशी नहीं ले सकती। उसे पहले मजिस्ट्रेट के पास जाना होता है और तलाशी का वारंट लेने के लिए ऐसा सम्भावित कारण दिखाना पड़ता है जिससे जाहिर हो कि उक्त व्यक्ति ने कोई अपराध किया है। किसी व्यक्ति का सम्पत्ति और एकांत विषयक अधिकार उसके घर के साथ-साथ उसके काग़ज़-पत्रों, उसकी पुस्तकों और पत्रिकाओं और उसके कार्यालय और उसकी मोटर तक फैला हुआ है।

सम्पत्ति का उपयोग प्रायः सार्वजनिक हित को प्रभावित करता है। कोई व्यक्ति गड़बड़ मचा सकता है। इसे शासन द्वारा नियमित किया जा सकता है। नगर-आयोजना के लिए यह आवश्यक हो सकता है कि कुछ विशिष्ट-क्षेत्र किसी विशिष्ट उपयोग के लिए ही रख छोड़े जाएँ। ऐसा

सम्भव है। **यूक्लिड वि० एम्बलर कं०**, 227 यू० एस० 362। नगरों को सुन्दर और स्वस्थ तथा स्वच्छ बनाने के लिए भी क्षेत्रीकरण का उपयोग हो सकता है। **बरमैन वि० पार्कर**, 348 यू० एस० 26।

एक समय था जब फैक्ट्रियों के मालिक, फैक्ट्रियों के हालात, काम के घण्टों और मजूरी को नियमित करने के सरकारी-प्रयत्नों का विरोध करने में सफल हो जाया करते थे। **लोकनर वि० न्यू यार्क**, 198 यू० एस० 25। इसका सिद्धान्त यह था कि राज्य सरकारें इन मामलों को नियमित करके मालिकों को अपनी "सम्पत्ति" से वंचित करती हैं या चौदहवें संशोधन में दी गई, संविदा करने की "स्वतंत्रता" का हनन करती है। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता। उपयोगिता-कम्पनियाँ जो दरें वसूल करती हैं या जो किराया मकानदार वसूल करते हैं उनसे "मूल्य" पर प्रभाव पड़ता है। **ब्लाक वि० हेर्श**, 256 यू० एस० 135।

यदि कारखानेदार अपने इच्छानुसार वेतन दे सके तो उसकी पूंजी पर मिलने वाला लाभ बढ़ जाएगा। किन्तु राज्यों और संघीय सरकार ने, अपनी विधायक शाखा द्वारा, अनेक नियंत्रण स्थापित कर रखे हैं। कुछ उद्योगों में न्यूनतम वेतन तय किये गए हैं और उन क़ानूनों को वैध माना गया है। **वेस्ट होटल कं० वि० पैरिश**, 300 यू० एस० 379। मूल्य-नियंत्रण भी वैध माना गया है। **नेब्बिया वि० न्यू यार्क**, 291 यू० एस० 502; **सनशाइन कोल कं० वि० एडकिन्स**, 310 यू० एस० 381। सार्वजनिक उपयोगिताओं की दरें कभी की निश्चित की जा चुकी हैं। वास्तव में, सामाजिक विधायन में आजकल न्यायालयों का दर्शनशास्त्र उस उदारता को प्रतिबिम्बित कर रहा है जिसके लिए न्यायमूर्ति होम्स और न्यायमूर्ति ब्रैण्डीज़ ने किसी समय माँग की थी। **लॉकनर वि० न्यू यार्क**, 198 यू० एस० 45, 74; **टाइसन एण्ड ब्रा० वि० बण्टन**, 273 यू० एस० 418, 445। पिछली आधी शताब्दी में न्यायांग की प्रवृत्ति यह रही है कि यदि

यह समझने का कोई तर्कपूर्ण आधार हो कि किसी क़ानून के लिए सार्व-जनिक-आवश्यकता मौजूद है, तो सरकार को, "क़ानून की उचित प्रक्रिया" को भंग किए बगैर, आर्थिक और व्यापारिक मामलों को नियमित करने की अनुमति दे दी जाय। **गिबोनी वि० एम्पायर स्टोरेज कं०**, 336 यू० एस० 490।

फिर भी, सम्पत्ति विषयक हितों को हमारे संविधान में बहुत प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त है। जैसा कि जॉन लॉक ने अपने **ट्रीटाइज़ आफ सिविल गवर्नमेण्ट** (1690), में लिखा है, "उस वस्तु को मेरी सम्पत्ति माना ही नहीं जा सकता जिसे कोई दूसरा व्यक्ति जब चाहे मेरी अनुमति के बिना ही, साधिकार मुझसे ले सके।" पाँचवें संशोधन का आदेश है कि "कोई निजी सम्पत्ति, न्यायसंगत क्षतिपूर्ति के बिना" नहीं ली जाएगी। इसका अर्थ है कि सरकार अब जॉन की सम्पत्ति लेकर स्मिथ को नहीं दे सकती, जैसा कि किसी समय के शासक किया करते थे। लिये जाने का उद्देश्य भी होना चाहिए "सार्वजनिक उपयोग"। इसके अतिरिक्त मालिक को "उससे ली गई सम्पत्ति के पूरी तरह बराबर धन" अवश्य चुकाया जाना चाहिए। **यूनाइटेड स्टेट्स वि० मिलर**, 317 यू० एस० 369, 373। सम्पत्ति के "लिए जाने" का क्या अर्थ है यह भी उदारतापूर्वक समझाया गया है। किसी भूमि पर सरकारी हवाई जहाज़ों का बहुत नीचे उड़ना उसे कुछ खेती-कार्यों के लिए अनुपयोगी बना सकता है। संविधान की दृष्टि से, इस प्रकार, सर-कार उस भूमि का कुछ मूल्य कम कर देती है और इसके लिए उसे मुआ-वज़ा देना चाहिए। **यूनाइटेड स्टेट्स वि० काज़बी**, 328 यू० एस० 256।

4. अधिकार-पत्र का व्यावहारिक स्वरूप
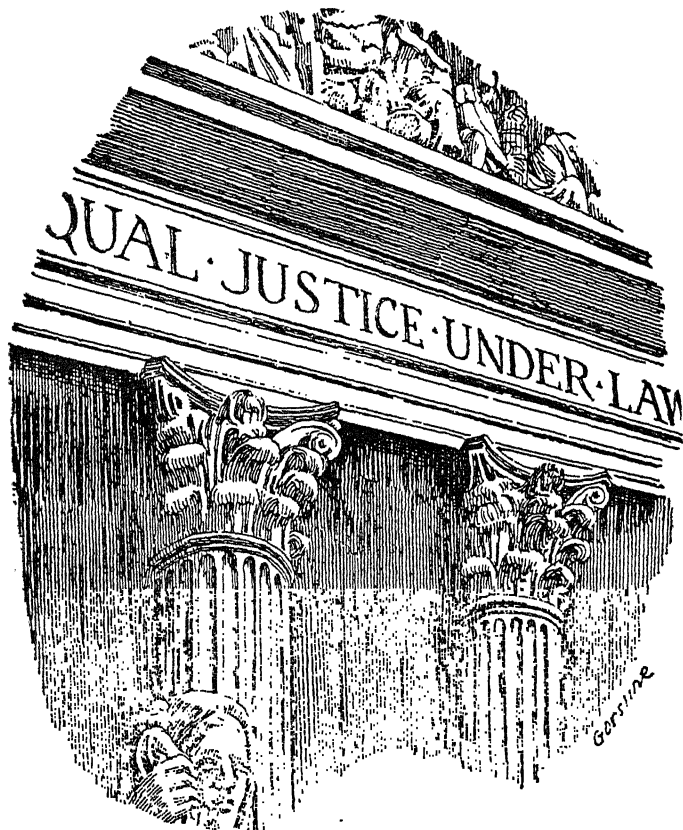
प्राय: हमारी स्वतंत्रताओं को जो चुनौती मिलती है वह ऐसे आदमियों से नहीं मिलती जो जान-बूझकर हमारी शासन-प्रणाली को नष्ट करने पर उतारू हों, बल्कि सद्भाव वाले व्यक्तियों से मिलती है, ऐसे व्यक्तियों से जो अपने किसी विशेष उद्देश्य के कारण इस बात की ओर ध्यान ही नहीं दे पाते कि जो कुछ वे करने जा रहे हैं वह स्वतंत्रता में बाधा पहुँचाने वाला है। कुछ उदाहरण इस प्रकार हैं :

—इस्तगासा किसी बुरे व्यक्ति को सज़ा दिलाने के लिए इस कदर निश्चय किए होता है कि मौलिक प्रक्रियात्मक सुरक्षाओं की अवहेलना कर बैठता है;

—कोई सेनापति, हमारे देश का बचाव करने के उत्साह में सैनिक क़ानून को नागर-क्षेत्र में लागू कर बैठता है;

—किसी पुलिस अफ़सर की, व्यवस्था कायम रखने की चिन्ता इतनी बढ़ती है कि वह लोगों को सार्वजनिक रूप से भाषण देने की स्वतंत्रता से वंचित कर डालता है।

प्राय: इस प्रकार के लोगों के उद्देश्य सराहनीय होते हैं। किन्तु हमें यह याद रखना चाहिए कि स्वतंत्रताओं की सुरक्षा उद्देश्यों पर निर्भर नहीं होती। स्वतंत्रता के दमन का अर्थ एक ही रहता है चाहे दमनकर्त्ता सुधारक हो चाहे डाकू। भटके हुए उत्साह के विरुद्ध सबसे बड़ी सुरक्षा है, संविधान में गारंटी की गई स्वतंत्रताओं के भंग के प्रति निरन्तर सजगता। तात्कालिक माँग के सम्मुख किसी स्वतंत्रता का समर्पण, किसी और बड़े समर्पण को सरल बना देता है। अधिकार-पत्र के लिए की जाने वाली लड़ाई अनन्त है।

कोई कह सकता है, "इन मसलों का मतलब तो मुझसे नहीं है। आप

अभी तक दूसरों की स्वतंत्रता के बारे में बात करते रहे हैं—नीग्रो लोगों, जापानियों, जेहोवा'ज़ विटनेसेज़, निरीश्वरवादियों, साम्यवादियों, फासिस्टों, कम्यूनिस्टों के बाल-बच्चों, अपराधियों, स्मट पेडलरों आदि की स्वतंत्रता के बारे में। केवल अल्पसंख्यक-समुदाय, पागल, सनकी और शरारती लोग ही ये समस्याएँ खड़ी करते हैं। एक औसत अमेरिकी को इन बातों के बारे में चिन्तित होने की ज़रूरत नहीं है।"

कुछ लोग इससे भी आगे बढ़कर कहते हैं कि "ऐसे लोग अदालतों और संविधान से मिलने वाली सुरक्षा के अधिकारी नहीं हैं। भला हम कम्यूनिस्टों और अपराधियों के 'अधिकारों' की चर्चा क्यों करें ? वे किन्हीं अधिकारों के पात्र नहीं हैं।"

यह प्रवृत्ति खतरनाक है। संविधान यह नहीं कहता कि "कम्यूनिस्टों के अलावा किसी भी व्यक्ति को, क़ानून की प्रक्रिया के बगैर, उसके प्राणों, स्वतंत्रता, या सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जायगा।" इसमें कोई भी छूट नहीं है। उसका आदेश है कि "कोई भी व्यक्ति, क़ानून की उचित प्रक्रिया के बगैर प्राणों, स्वतंत्रता या सम्पत्ति से वंचित नहीं किया जाएगा।" हमें सिर्फ इसीलिए अपवाद प्रस्तुत कर देने का अधिकार नहीं है कि हम किसी व्यक्ति विशेष को या उन विचारों को, जिनका वह प्रतिनिधित्व करता है, पसन्द नहीं करते हैं।

किसी एक व्यक्ति की स्वतंत्रताएँ हममें से हरएक की स्वतंत्रताएँ हैं। अगर हम एक बार यह कहना शुरू करें कि "संविधान को कम्यूनिस्टों की रक्षा नहीं करनी चाहिए," तो हमें इस प्रश्न का सामना करना होगा कि 'कम्यूनिस्ट कौन है ?" हम कम्यूनिस्ट पार्टी की सदस्यता का कार्ड रखने वाले कम्यूनिस्टों को ही भाषण की स्वतंत्रता से वंचित रखना चाहते हैं या हमारी यह मान्यता है कि ऐसे दूसरे लोग भी मौजूद हैं जो अपनी सदस्यता तो छिपाना चाहते हैं मगर किसी भी तरह कम कम्यूनिस्ट नहीं

हैं। यदि हम उन्हें भी संविधान से बाहर रखने का प्रयत्न करें, तो फिर क्या हमारा यह भी कहना है कि जो व्यक्ति कम्यूनिस्ट पार्टी से मेल खाने वाले विचार रखे उसे भी चुप करा दिया जाना चाहिए ? ये सब सुझाव काल्पनिक नहीं हैं। कांग्रेस की एक कमेटी के अध्यक्ष ने कुछ ही दिन हुए जब कहा था :

> पंचमागी और देशद्रोही संघटनों से तब तक भले प्रकार निपटा ही नहीं जा सकता जब तक हम सरकारी सेवाओं में—यहाँ तक कि महत्त्वपूर्ण पदों पर—ऐसे सैकड़ों वामपक्षीय और रेडिकल लोगों को रखे हुए हैं जो निजी उद्यम की हमारी व्यवस्था में आस्था नहीं रखते···

इस कसौटी के अनुसार तो सामाजिक सुरक्षा नियमों, या टेनेसी वेली अथारिटी की सुरक्षा और संवर्द्धन, या संघटन और हड़ताल करने के श्रमिकों के अधिकार की रक्षा, या अतिरिक्त व्यापारिक लाभों पर कर लगाने, या न्यास-विरोधी कानूनों के लागू करने का पक्ष-समर्थन करने वाले हर व्यक्ति पर "वाम-पक्षी या रेडिकल" का लेबल लगाया जा सकता है, और इसीलिए उसका वर्गीकरण ऐसे व्यक्तियों में किया जा सकता है जिन्हें संवैधानिक संरक्षण पाने का अधिकार नहीं है। हम एक बार लोगों को उनके मतों के कारण चुनने या छाँटने लगें और यह तय करने लगें कि कुछ लोग तो प्रथम संशोधन का संरक्षण पाने के अधिकारी हैं और कुछ नहीं हैं तो फिर किसी के भी अधिकार सुरक्षित नहीं रह जाएँगे। भाषण की स्वतंत्रता का मतलब सिर्फ वह बात कहने की स्वतंत्रता रह जाएगा जिससे उस समय बहुमत या कुछ सरकारी अधिकारी सहमत हों। यह तो रूसी प्रणाली है जिसमें एक स्टालिन के विचार बदलने से आज की धर्म-निष्ठा कल को धर्मद्रोह बन सकती है। कुछ गैर-कम्यूनिस्ट देशों में भी यह प्रणाली चालू है। मध्य-पूर्व में ऐसे देश हैं जहाँ के सम्पादक अपने को जेल की सज़ा और अपने अखबार का साज़

सामान ज़ब्त हो जाने के भय से, अपने यहाँ की सत्ता की आलोचना करने वाले सम्पादकीय छापने का साहस नहीं कर सकते। 1960 में फारमोसा में च्यांग काई-शेक ने ली चेन पर षड्यंत्र का मुकदमा इसलिए चलाया था कि ली चेन ने भ्रष्ट और प्रतिक्रियावादी कोमिन्तांग के विरोध में एक राजनैतिक दल संघटित करने का यत्न किया था। उस पर यही अभियोग सिद्ध किया गया और उसे सात साल की सज़ा दी गई। उसी समय, एक पत्रिका के सम्पादक फू चुंग-मी को, संविधान की अवहेलना करके च्यांग काई-शेक को तीसरे सत्र के लिए राष्ट्रपति घोषित करने के लिए सरकार की आलोचना करने पर, तीन वर्ष की सज़ा दी गई। यह अमेरिकी प्रणाली नहीं है।

वास्तव में तो, अलोकप्रिय विचार, अल्प-संख्यकों के विचार ही ऐसे हैं जिन्हें सुनने की हमें आवश्यकता है। जिससे हम पहले ही सहमत हों उसे सुनकर हम कुछ सीखते नहीं हैं। हमें वे विचार सुनने की ज़रूरत है जिनसे सम्भवतः हम सहमत न हों। जैसा कि स्टुअर्ट मिल ने कहा था, "कुछ बार, और अधिक विचार के बाद, हम नए विचार में अच्छाई पाने लगते हैं और अगर हम उनमें कोई अच्छाई न पायें तो विरोधी विचारों की कसौटी पर कसकर हम अपने विचारों को और अच्छी तरह समझने लगते हैं।"

यही सिद्धान्त अन्य क्षेत्रों में भी सही है। किसी अपराध के अभियुक्तों के अधिकार बहुत महत्त्वपूर्ण हैं क्योंकि हो सकता है, और अक्सर होता है कि लोगों पर झूठा अभियोग लग जाय। एक जज दो या दो से अधिक दशाब्दों तक आपराधिक परीक्षणों को देखने के बाद हाल ही में इस निष्कर्ष पर पहुँचे थे कि सम्भवतः अपराधियों के साफ छूट जाने के बनिस्बत निर्दोष व्यक्तियों के दण्डित हो जाने के मामले अधिक होते हैं। हर परीक्षण में प्रस्तुत की गई सुरक्षाएँ न्याय के इसी प्रकार के भटकाव के विरुद्ध हैं। परीक्षण-विषयक इन सुरक्षाओं को छोड़ देने से क्या-कुछ हो सकता है इसके अनेक दुःखद उदाहरण हमें निष्ठा-कार्यक्रमों में मिलते हैं। निष्ठा के मामलों

के अध्ययन से पता चलता है कि कुछ कर्मचारियों के नौकरी से निकाल दिए जाने का कारण था ग़लत पहचान, ऐसी अफ़वाह जिसकी भले प्रकार जाँच नहीं हुई और गुमनाम मुखबिरों का द्वेष और विषाक्तता। कोई कह सकता है कि "मेरे साथ तो ऐसा नहीं हो सकता।" मगर सचाई यह है कि ऐसा हुआ है, और हमारे कई एक भले पड़ौसियों के साथ ऐसा हुआ है।

संक्षेप में, किसी भी व्यक्ति की स्वतंत्रता तब तक सुरक्षित नहीं है जब तक कि सभी लोगों की स्वतंत्रता सुरक्षित न हो।

लेकिन यदि हम अपनी स्वतंत्रताओं के लिए कोई ख़तरा महसूस न भी करें, और चाहे हम अपने-आपको इसलिए सुरक्षित भी महसूस करें कि हम एक ऐसे समुदाय के सदस्य हैं जो महत्त्वपूर्ण है और समादृत है, तब भी हमें यह समझना चाहिए कि हमारा 'बिल आफ राइट्स' (अधिकार-पत्र), कम-भाग्यशालियों के प्रति न्यायपूर्ण व्यवहार की संहिता है, और हमें पूरे सम्मान और सदाशयता के साथ इसका पालन करना चाहिए।

यह कहना तो सरल है कि "अदालतें और वकील अधिकार-पत्र की चिन्ता करें; वे ही मेरे अधिकारों की रक्षा कर लेंगे।" मगर यह है एक ख़तरनाक बात। अन्ततः किसी जनतंत्र में, सरकार अपने शासितों की अनुमति पर निर्भर होती है। अगर "हम याने जनता" अधिकार-पत्र में विश्वास न रखें तो न्यायालय भी इसे प्रभावशाली रूप में लागू करने में समर्थ न होंगे। सम्माननीय श्री डूले की तरह यह तो कहना ठीक नहीं है कि "अदालतें चुनावों के परिणामों का अनुसरण करती हैं।" क्योंकि संघीय न्यायाधीशों का कार्यकाल आजीवन रहता है और, राज्यों में भी, जहाँ उनका चुनाव होता है, वे हमारे संविधान के शाश्वत सिद्धान्तों की रक्षा के लिए लोक-मत के विरुद्ध उठ खड़े होते हैं। लेकिन वे ऐसा कर इसलिए पाते हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका की जनता का बहुसंख्यक भाग, किसी विशिष्ट निर्णय से कितना ही असहमत क्यों न हो, हमारे लिखित संविधान के उन

मौलिक सिद्धान्तों से पूर्णतः सहमत है, जिनमें संविधान की व्याख्या करने और उसे लागू करने का, हमारे द्वारा दिया गया, अदालतों का अधिकार भी शामिल है।

स्वतंत्रता की भावना, अधिकार-पत्र के सिद्धान्त, हमारे दैनिक जीवन के ताने-बाने का इतना बड़ा अंश है जितने की हममें से बहुत से लोग कल्पना भी नहीं कर सकते। हरएक वकील जानता है कि क़ानूनी सिद्धान्त ऐसे सैकड़ों मामलों में लोगों के आचरण को प्रभावित करते हैं, जो कभी भी अदालत तक नहीं पहुँचते। अधिकतर मामले अदालत में तो तब पहुँचते हैं जब कोई क़ानून की अवहेलना करने पर उतारू हो जाता है, जब क़ानूनी सिद्धान्तों के स्पष्टीकरण की ज़रूरत होती है, जब लोग तथ्यों के बारे में सहमत नहीं हो पाते, या जब कोई व्यक्ति अप-हौज़ की तरह अपने "संकोचों" से चिपकने का आग्रह करने लगता है। अदालतों के फैसले, किसी हिमखण्ड (आइसबर्ग) के दीख पड़ने वाले हिस्सों की तरह होते हैं। हमारे दैनिक जीवन को प्रभावित करने वाला अधिकांश क़ानून तो उस नाटकीय संघर्ष और प्रचार से वंचित ही रहता है जो मुकदमेबाज़ी में पाई जाती है।

यही सिद्धान्त नागर अधिकारों (सिविल राइट्स) के बारे में भी सही है। अधिकांश क्षेत्रों में हमारी जनता सहज भाव से स्वतंत्र भाषण और स्वतंत्र अन्तःकरण, भेद-भाव से विरोध, नागर और धर्म-निरपेक्ष सत्ता के महत्त्व के मौलिक सिद्धान्तों को मानती और उन पर आचरण करती है। सिर्फ़ कभी-कभी ऐसा होता है जब किसी संकट के कारण हम अपना विवेक खो बैठते हैं, या कोई गुट अतिरिक्त शक्ति चाहने लगता है, और उन्हें दूर करने के लिए अदालतों की शरण लेनी पड़ती है।

इसके अतिरिक्त, अदालतें और क़ानून, अधिक से अधिक, हमारी स्वतंत्रताओं को न्यूनतम संरक्षण प्रदान कर सकते हैं। अधिकांशतः वे

वे अपने बच्चों को दूसरे स्कूलों में हटा ले जाएँ। भेद-भाव की नीति के कई ऐसे बारीक तरीके हैं जिनके विरुद्ध क़ानून कुछ नहीं कर सकता। लोगों के साथ जाति-वंश का विचार किए बग़ैर समानता का व्यवहार हममें से हरएक की प्रवृत्ति और क्रियाओं पर उतना ही आश्रित है जितना क़ानून द्वारा लागू किए जाने पर।

पढ़ाया क्या जाय? आज अमेरिका की शिक्षा एक विराट् चुनौती का सामना कर रही है। हमें अचानक यह तथ्य मालूम हुआ है कि मस्तिष्कों या ज्ञान पर किसी स्वतंत्र देश का ही इज़ारा नहीं है, सोवियत तानाशाही भी बड़ी संख्या में समुचित रूप से प्रशिक्षित नागरिक पैदा कर रही है। फिर भी, यदि हम लाभ उठा सकें तो कम्यूनिस्ट देशों के बनिस्बत अपनी शिक्षा-व्यवस्था में हम कुछ बातों का फायदा उठा सकते हैं। किसी स्वतंत्र देश की शिक्षा की शक्ति का एक स्रोत यह है कि यह विचार की स्वतंत्रता और मौलिकता को बढ़ावा दे सकती है। दुर्भाग्यवश हमारी पब्लिक-स्कूल व्यवस्था इस बारे में, कुछ क्षेत्रों में प्राय: असफल हो जाती है। पढ़ाई नीरस, शुष्क और एकरस हो जाती है। उसमें "विवादास्पद प्रश्नों" से बचने, सिर्फ़ "सुरक्षित" और सामान्यत: सर्वमान्य बातें ही पढ़ाने, और इस तरह सिर्फ़ परम्परागत दृष्टिकोणों की तोता-रटन्त को ही बढ़ावा देने की प्रवृत्ति पैदा हो जाती है। इसका एक कारण रहा है निष्ठा जाँच के कार्यक्रमों और परीक्षा शपथों में ग्रस्त शिक्षकों का विचार-नियंत्रण, जिसकी चर्चा मैं कर चुका हूँ। दूसरा कारण है, परम्परा-विरुद्ध विचार व्यक्त करने वाले, विशेषकर विश्वविद्यालयों के शिक्षकों के विरुद्ध, विधायक-जाँचें करने की परम्परा। **स्वीज़ी वि० न्यू हैम्पशायर,** 354 यू० एस० 254।

क़ानून इन बातों के विषय में बहुत संकुचित सीमा तक ही कुछ कर सकता है। किन्तु बहुत अधिक अंश में हमारे स्कूलों और कालेजों में बौद्धिक स्वातंत्र्य की सुरक्षा हमारे स्कूलों-कालेजों के अधिकारियों, न्यास-मण्डलों,

जनक-शिक्षक संघों, छात्र-दलों, स्थानीय पत्रों के सम्पादकीय लेखकों; गिरजे के पादरियों; और सामान्यतः जनमत पर आश्रित होते हैं।

हम लोग अपने शिक्षकों को, कक्षा में, "विवादास्पद" विषयों की चर्चा करने के लिए प्रोत्साहित करना चाहते हैं—जैसे सार्वजनिक बनाम निजी शक्ति या समाजवाद बनाम पूँजीवाद—या हम अपने बच्चों के "कोमल" मस्तिष्कों की ऐसे हर विचार से रक्षा करना चाहते हैं जिससे कि हमारे समाज के ठेकेदार सहमत नहीं हैं ? निश्चय ही दोनों पक्षों पर विवाद होना चाहिए।

पब्लिक स्कूलों की बहुत-सी पाठ्य पुस्तकें,स्कूल-बोर्ड के परम्परावादी सदस्यों की आपत्तियों को ध्यान में रखकर इतनी निष्प्राण बना दी जाती हैं कि वे कितनी नीरस हो जाती हैं इसका अन्दाज़ा भी नहीं लगाया जा सकता। आधुनिक आर्थिक और राजनैतिक मुद्दों की सारी उत्तेजना और चुनौती इनमें नष्ट हो जाती है। क्या यही शिक्षा हम चाहते हैं ?

जनक-शिक्षक संघों के सदस्य ऐसे शिक्षक को क्या प्रोत्साहन देते हैं जो "विवादास्पद" प्रश्नों को उठाता है ?

उसके छात्र उसे क्या प्रोत्साहन देते हैं ?

वे लोग नये विचारों की चर्चा में उत्सुकता से भाग लेते हैं या जाकर अपने माता-पिता से यह रिपोर्ट करते हैं कि "मि० अमुक तो सोशलिस्ट हैं ?"

शिक्षकों से छात्रों की बहस को प्रोत्साहन दिया जाता है, या हर असहमति को अनुशासन-विषयक समस्या माना जाता है या एक ऐसी ग़लती माना जाता है जिसके कारण छात्र को निचली श्रेणी दी जाय ?

ऐसे शिक्षक को स्थानीय प्रेस और चर्चों से क्या समर्थन मिलता है ?

यदि कोई मुसलमान या हिन्दू 'लार्ड्स प्रेयर' को दुहराने से इनकार कर दे या कोई विदेशी या जेहोवा'ज़ विट्नेस झंडे को सलामी देने से

इनकार कर दे, तो उसके सहपाठियों की प्रतिक्रिया कैसी होती है ? वे लोग इस असहमति को स्वीकारते और उसका आदर करते हैं या उसका अपमान करते हैं और उसका बहिष्कार कर देते हैं ?

ये ऐसी समस्याएँ नहीं हैं जो प्रायः अदालतों में स्थान पाती हैं किन्तु इनके प्रति हमारी प्रतिक्रिया, इस बात की द्योतक है कि उस जीवन का स्तर क्या है जो हम जीते हैं। हमें अधिकार-पत्र के सिद्धांतों में फिर से आस्था उत्पन्न करने की ज़रूरत है। ये सिद्धान्त हैं दूसरों के प्रति सहन-शीलता और आदर के, विरोधी मतों के प्रोत्साहन के, मनुष्य के साथ गौरवपूर्ण व्यवहार करने के। ये वे सिद्धान्त हैं जो, जहाँ तक गौरव, आस्थाओं, अन्तःकरण, जीवन और स्वतंत्रता का सवाल है, व्यक्ति को राज्य से ऊँचा दर्जा देते हैं।

हमारी स्वतंत्रताएँ तभी सुरक्षित नीवों पर आधृत होंगी जब हमारे सभी समुदायों द्वारा अधिकार-पत्र के सिद्धान्त पूरी तरह स्वीकार कर लिए जाएँगे।

ब्रिटेनवासियों की भी संवैधानिक-शासन की एक प्रणाली है और ब्रिटिश-प्रजा की स्वतंत्रताओं के बारे में उन्हें उचित ही गर्व है। फिर भी ये स्वतंत्रताएँ कहीं भी लिखित रूप में व्यक्त नहीं हैं। ब्रिटिश अदालतों को यह अधिकार नहीं है कि पार्लियामेण्ट के किसी क़ानून को, इस आधार पर अवैध घोषित कर दें या लागू करने से इनकार कर दें कि यह व्यक्ति के संवैधानिक अधिकारों का हनन करता है। ब्रिटिश संविधान वास्तव में पार्लियामेण्ट के सदस्यों और ब्रिटिश अधिकारियों द्वारा अपनाई गई आत्म-संयम की परम्परा का नाम है। दूसरी ओर सोवियत संघ में एक विस्तृत, लिखित संविधान है जिसमें वैयक्तिक अधिकारों की कुछ बहुत ही विशिष्ट गारंटियाँ निहित कर दी गई हैं। लेकिन फिर भी, जो कुछ काग़ज़

पर लिखा हुआ है वह सोवियत रूस में स्वतंत्रता की कोई गारंटी नहीं दे पाता।

हमारा संविधान क्या कहता है, हमारी विधायिकाएँ क्या करती हैं और हमारे न्यायालय क्या लिखते हैं यह बहुत महत्त्वपूर्ण है। किन्तु हमारे दैनिक जीवन में रहने वाली स्वतंत्रता की वास्तविकता, लोगों के उन दृष्टिकोणों और नीतियों में दिखलाई पड़ती है जो वे उस मुहल्ले या उस बस्ती में आपस में अपनाते हैं, जहाँ वे रहते हैं। वहीं हम **एक जीवन्त अधिकार-पत्र** की वास्तविक मात्रा देख पाएँगे।

1960 के चुनावों से पहले, जिसमें एक धर्मप्राण कैथोलिक, लुई म्यूनोज़ मारिन, पोर्टो रिको के गवर्नर-पद के लिए खड़ा हुआ था, तीन कैथोलिक बिशपों—मोस्ट रेव० जेम्स पी० डेविस, मोस्ट रेव० जेम्स ई० मैक्मैनस और मोस्ट रेव० लुई ए० रिड्रिगीज़—ने जनता के नाम एक बयान जारी किया था कि म्यूनोज़ मारिन को वोट देना "पाप" होगा। उन्होंने कारण यह दिए थे कि गवर्नर ने गर्भ-निरोध (बर्थ-कण्ट्रोल) को, और कामन लॉ के अनुसार होने वाले विवाहों को सहन किया है और यह मानता है कि पादरियों को अपने अनुयायियों की राजनैतिक नहीं, धार्मिक आवश्यकताओं का खयाल रखना चाहिए। फिर भी, म्यूनोज़ मारिन चुनाव में विजयी हुआ। इस पर सान जुआन केथेड्रल के पास्टर, रेव० टॉमस मैसोनेट ने घोषणा की कि मेरे द्वारा "होली कम्यूनियन" दिए जाने से पहले, म्यूनोज़ मारिन को वोट देने वालों को अपना "पाप" स्वीकार करना होगा। इस तरह की घोषणाएँ अधिकार-पत्र में निहित **राज्य और चर्च के पार्थक्य** विषयक अपेक्षा की अवहेलना करती थीं। इस सबके बावजूद कैथोलिक-विचारों के प्रमुख अंग द्वारा इन कैथोलिक पादरियों की भर्त्सना, और 90 प्रतिशत कैथोलिकों वाले चुनाव-क्षेत्र से हुई म्यूनोज़ मारिन की विजय यह दिखलाती है कि राज्य और चर्च के पार्थक्य का सिद्धान्त हमारे जीवन की

एक जीवन्त शक्ति है।

हाल ही में, वाशिंगटन, डी० सी०, के दो लड़कों ने मुझे एक अनुभव सुनाया था। उनमें एक "श्वेत" था और दूसरा "रंगीन"। "रंगीन" लड़के को एक रोज़, छात्रावास में अपने कमरे में लौटने पर, अपनी मेज़ पर एक पर्चा मिला जिस पर लिखा था—"ओ बे नीग्रो ! अपने घर लौट जा।" और उसके नीचे हस्ताक्षर की जगह "कू क्लुक्स क्लान" लिखा था।

मैंने पूछा—"तो फिर तुमने क्या किया ?"

श्वेत लड़के ने जवाब दिया, "हमने एक याचिका लिखकर सारे छात्रों में घुमाई। इस याचिका पर लिखा था, 'हम शर्मिन्दा हैं'।"

"जीवन्त अधिकार-पत्र" कहने से मेरा यही आशय है।

०